ओ३म्

ऋग्वेदस्य ऋक्संख्या

[संस्कृत-हिन्दीभाषायुता]

लेखक :—
युधिष्ठिर मीमांसक।

विषय-सूची

प्रकाशकः—

रामलाल कपूर ट्रस्ट
बहालगढ़
(सोनीपत-हरयाणा)

मुद्रकः—

शान्तिस्वरूप कपूर
रामलाल कपूर ट्रस्ट प्रेस
बहालगढ़ (सोनीपत-हरयाणा)
पिन १३१०२१

संवत् २०४१, मूल्य 15.00

❀ ओ३म् ❀

ऋग्वेदस्य ऋक्संख्या

[लेखकः—युधिष्ठिरो मीमांसकः]

सुविदितमेवैतद् वैदिकवाङ्मयजुषां यदासन् कदाचिदृग्वेदस्यैकविंशति संहिताः । तासु सम्प्रत्येकैव संहिता समुपलभ्यते । प्राचीनपरम्परासंरक्षकाणां भारतीयविदुषां जागरूकप्रयत्नेन अतिप्राचीनकालादियमविकृतैवोपलभ्यते । तत्रोपसार्धदशसहस्रर्क्परिमाणायां संहितायां नैकोऽपि वर्णो विकृतिं प्राप, ऋचां नैयूनाधिक्यस्य तु का कथा ? एवं परमप्रयत्नेन संरक्षितायामप्यृक्संहितायां तदृक्परिमाणे प्राचीना अर्वाचीनाश्च प्रायेण सर्वेऽपि वैदिकवाङ्मयविदो मिथो विप्रवदन्ते । तथाहि—

शौनकोऽनुवाकानुक्रमण्यां १०५८० ऋचः पादश्चैकः; छन्दःसंख्यापरिशिष्टकारः १०४०२ ऋचः; सर्वानुक्रमणीटीकाकारो जगन्नाथः १०५५२ ऋचः; चरणव्यूहव्याख्याता महिदासो बालखिल्यसहिताः १०५५२ ऋचः, बालखिल्यरहिताः १०४७२, तदुद्धृतश्लोकानुसारं १०४१६ ऋचः, ऋग्भाष्यरचयिता वेङ्कटमाधवः १०४०२ ऋचः, स एव द्विपदापक्षे १०४८० ऋचः; स्वामी दयानन्दः १०५८९ ऋचः, परं तदुल्लिखिते प्रतिमण्डलयोगे संहृत्य १०५२१ ऋचः, अध्यापको मैकडानलः २ ऋचः, स एव द्विपदापक्षे १०५६६ ऋचः, ८-८-१९१६ तिथ्यङ्कितपत्रानुसारं[१] १०५६५; पण्डितसत्यव्रतः १०५२२; हरिप्रसादो वैदिकमुनिश्च १०४४० ऋच इति संगिरते ।

ऋग्वेद की ऋक्संख्या

वैदिक वाङ्मय से परिचित विद्वान् इस बात से परिचित हैं कि पुराकाल में ऋग्वेद की शाखाओं को मिलाकर २१ संहिताएं थीं । उनमें से इस समय एक ही उपलब्ध है। प्राचीन परम्परा के संरक्षक विद्वानों के जागरूक प्रयत्न से अति प्राचीन काल से इस लगभग साढ़े दश हजार मन्त्रों से युक्त संहिता में एक वर्ण भी विकार को प्राप्त नहीं हुआ, ऋचाओं की न्यूनाधिकता तो दूर की बात है । इस प्रकार परम प्रयत्न से संरक्षित ऋक्संहिता में कितनी ऋचाएं हैं, इस विषय में प्राचीन अर्वाचीन अनेक विद्वानों ने लिखा है,परन्तु यह प्रश्न अभी तक रहस्यमय बना हुआ है। किन्हीं भी दो विद्वानों की ऋग्गणना परस्पर नहीं मिलती । जैसा कि—

शौनकीय अनुवाकानुक्रमणी—१०५८० और एक पाद । छन्दसंख्या-परिशिष्ट—१०४०२ । ऋक्सर्वानुक्रमणी-टीकाकार जगन्नाथ—१०५५२ । चरणव्यूह-टीकाकार महिदास—बालखिल्यसहित १०५५२, बालखिल्य-बिना १०४७२, उसके द्वारा उद्धृत श्लोकानुसार १०४१६ । वेङ्कटमाधव—

---

१. पत्रमिदं मैकडानलाध्यापकेन पण्डितभगवद्दत्ताय प्रेषितम् । तदीये 'वैदिक वाङ्मय का इतिहास, नाम्नो ग्रन्थस्य प्रथमे भागे २४१ पृष्ठे (सं० २) मुद्रितं द्रष्टव्यम् ।

किमत्र वैमत्ये कारणम्, कियत्यश्चर्क् संहितायां वस्तुत ऋच इत्यस्मिन् निबन्धे विवेचयामः।

शतपथ ऋचां परिमाणमेवमुल्लिखितम्—'स ऋचो व्यौहत द्वादशबृहतीसहस्राणि, एतावत्यो ह्यृचो याः प्रजापतिसृष्टाः' [१०।४।२।२३] **इति ।**

एतदनुसृत्य द्वादशबृहतीसहस्राणामृचां (१२००० × ३६) = ४३२००० चतुर्लक्षाणि द्वात्रिंशत्-सहस्राणि चाक्षरमानं जायेत । **तच्च शौनकीयानुवाकानुक्रमण्यापि** संवदति । **वर्तमानायामृक्संहितायां क्षैप्रप्रश्लेषाभिनिहितसन्धीनां व्यूहे कृतेऽपि ३९७२६५ त्रिलक्षाणि** सप्तनवतिसहस्राणि **पञ्चषष्ट्यधिक-द्विशतान्येवाक्षराणि भवन्ति । अतो जायते संदेहः**—किमियं **शातपथी ऋगक्षरमात्रा दशतय्या एवर्चामुत वेदचतुष्टयान्तर्वर्तिनीनां सर्वासामृचामिति ?**

अत्रैवं पश्यामः—शतपथस्योक्तप्रकरण **ऋग्यजुःसाम्नामेवाक्षरमानमुच्यते, नाथर्वाङ्गिरसाम् । वैदिकवाङ्मये यत्र क्वचिदपि ऋग्यजुःसाम्नां त्रयाणामेवोल्लेखस्तत्र ऋगादीनि पदानि न वेद-पराणि, अपि तु मन्त्रविशेषपराण्येव । यथोक्तं जैमिनिना**—'यत्रार्थवशेन पादव्यवस्था सा ऋक्, गीतिषु सामाख्या, शेषे यजुःशब्दः' **[मी० २।१।३५-३७] इति । अत एवं संभाव्यते—उक्ता**

१०४०२, तथा द्विपदापक्ष में १०४८० । **स्वामी** दयानन्द सरस्वती—१०५८९, परन्तु उनके प्रति-मण्डल गिनी गई ऋचाओं का योग १०५२१ । प्रो० मैकडानल—१०४४२, द्विपदापक्ष में १०५६९, तथा ८-८-१९१९ के पत्रानुसार १०५६५ । पं० सत्यव्रत सामश्रमी—१०५२२ । पं० हरिप्रसाद वेदिक मुनि १०४४० ।

हमारा मत है कि प्राचीन आचार्यों की ऋग्गणना प्रायः ठीक है । परन्तु उनके गणना-प्रकार में भेद होने से परस्पर विभिन्नता प्रतीत होती है । आधुनिक विद्वानों ने प्राचीन आचार्यों के गणना-प्रकार को भले प्रकार न समझ कर अनेक भयंकर भूलें की हैं । इस लेख में उनकी भूलों का निदर्शन और ऋग्वेद की शुद्ध ऋक्संख्या दर्शाने का यत्न किया जायेगा ।

शतपथ ब्राह्मण १०।४।२।२३ में लिखा है—

'स ऋचो व्यौहत द्वादश बृहतीसहस्राणि, एतावत्यो ह्यृचो याः प्रजापतिसृष्टाः ।'

अर्थात्—प्रजापति ने १२००० बारह सहस्र बृहती छन्द के परिमाण की ऋचाएं उत्पन्न कीं । इतनी ही प्रजापतिसृष्ट ऋचाएं हैं ।

बारह सहस्र बृहती छन्द का १२००० × ३६ = ४३२००० अक्षर-परिमाण होता है ।

शतपथ के इस प्रकरण को भले प्रकार देखने से विदित होता है कि यह अक्षर-परिमाण केवल ऋग्वेद की ऋचाओं का नहीं है, अपितु वेदचतुष्टयान्तर्गत समस्त ऋचाओं का है । क्योंकि शतपथ के इस प्रकरण में त्रयी विद्या का वर्णन करते हुए ऋक्, यजुः और साम का ही परिमाण दर्शाया है, अथर्व का नहीं । अतः इस प्रकार के ऋक् यजु और साम शब्द ग्रन्थ-विशेष के वाचक न होकर मन्त्रप्रकार के वाचक हैं । आचार्य जैमिनि ने त्रयीविद्या के लिए प्रयुक्त होनेवाले ऋक् यजुः और साम शब्द का अर्थ इस प्रकार दर्शाया है—

यत्रार्थवशेन पादव्यवस्था सा ऋक् । गीतिषु सामाख्या । शेषे यजुः शब्दः ।।

मीमांसा २।१।३५-३७।।

शतपथो ऋगक्षरगणना वेदचतुष्टयान्तर्गतानां सर्वासामेवर्चाम् । तत्रैतावन् सन्देहोऽवशिष्यते यच्छौनकेनानुवाकानुक्रमण्यां पारायणे १०५८० अशीत्यधिकपञ्चशतोत्तरदशसहस्रमृचः पादश्चैक इति ऋङ्मानमुक्त्वा शतपथवत् ४३२००० चतुर्लक्षाणि द्वात्रिंशत्सहस्राणि चाक्षराणीत्यक्षरमानमुक्तम्, तत्तु ऋग्वेदीयर्चामेव कथमुपपद्यत इति देवा एव वेदितुमर्हन्ति ।

ऋक्संहितान्तर्वर्तिनीनामृचां संख्यामुपक्रम्य विदुषां वैमत्यं प्रागुपदर्शितम् । तत् किं वास्तविकमुत गणनापद्धतिभेदमूलकमुत भ्रमप्रमादादिजन्यमिति सम्प्रति विचार्यते—

विशिष्टा ऋग्गणना-पद्धतिः

दृश्यन्ते हि दशतय्यां काश्चनेदृश्य ऋचो याः कदाचिद् द्विपदारूपेण गण्यन्ते, कदाचिच्च चतुष्पदारूपेण । तेषां द्विपदात्वेन चतुष्पदात्वेन च परिगणने संख्यावश्यं भिद्येत । अतस्तदेव तावद्विविच्यते—

सन्ति ऋग्वेद आहत्य १५७ सप्तपञ्चाशदुत्तरशतं द्विपदा ऋचः । तासु १७ सप्तदश नित्याः, १४० चत्वारिंशदुत्तरशतं च नैमित्तिकाः । इमाश्चत्वारिंशदुत्तरशतमृचो यज्ञे शंसनादिषु द्विपदात्वेन विनियुज्यन्ते । तथा च ब्राह्मणं भवति—'द्विपदाः शंसति' इति । सूत्र्यते चाश्वला-

---

अर्थात् चारों वेदों में जितने पादबद्ध (पद्यमय) मन्त्र हैं वे 'ऋक्', गानात्मक 'साम', और गद्य मन्त्र 'यजुः' कहाते हैं ।

किन्हीं-किन्हीं विद्वानों का विचार है कि अनुवाकानुक्रमणी में लिखा हुआ ४३२००० अक्षर-परिमाण ऋग्वेद की समस्त शाखाओं में पठित १०५८० और १ पाद ऋचाओं का है । हमें यह कल्पना ठीक प्रतीत नहीं होती । क्योंकि बालखिल्यरहित १०४७२ ऋचाओं का अक्षर-परिमाण ३९४२२१ होता है । यह अक्षरसंख्या पादपूर्त्यर्थ किए गए अक्षर-व्यूह को मानकर उपलब्ध होती है । अतः शेष १८० ऋचाओं और १ पाद का लगभग ३८ सहस्र अक्षर-परिमाण किसी प्रकार नहीं हो सकता । इस हेतु से भी शतपथोक्त ४३२००० अक्षर-परिमाण वेदचतुष्टयान्तर्गत समस्त पादबद्ध (पद्य) मन्त्रों का समझना चाहिए । शौनक ने केवल ऋग्वेद का ४३२००० अक्षर-परिमाण कैसे लिखा, यह हमें ज्ञात नहीं ।

विशिष्ट ऋग्गणना-पद्धति

ऋग्वेद की विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रदर्शित ऋक्संख्या पर विचार करने से पूर्व ऋग्वेद में ऋग्गणना की जो विशिष्ट पद्धति है, उसको समझ लेना अत्यावश्यक है । क्योंकि इसको यथार्थतया न समझने के कारण समस्त आधुनिक विद्वानों ने ऋग्गणना में भयङ्कर भूलें की हैं ।

ऋग्गणना और द्विपदा ऋचाएं—ऋग्वेद में कुछ मन्त्र ऐसे हैं, जिनको किसी समय दो-दो पाद का एक मन्त्र जानकर गिनते हैं, और किसी समय उन्हें चार-चार पादों का एक मन्त्र मानते हैं, अर्थात् उस समय दो-दो द्विपात् मन्त्रों का एक चतुष्पाद मन्त्र माना जाता है । द्विपदा पक्ष में ऋग्वेद में समस्त १५७ द्विपदा ऋचाएं हैं । इनमें से १७ नित्य द्विपदा ऋचाएं हैं, शेष १४० द्विपदा ऋचाएं नैमित्तिक हैं । अर्थात् ये १४० ऋचाएं वस्तुतः द्विपदा नहीं हैं, अपितु १४०÷२=

यनेन—'पश्वा न तायुमिति द्वैपदम्' [८।१२] **इति ।एता एवाध्ययनकाले चतुष्पदा भवन्ति । तदुक्तमृक्सर्वानुक्रमण्याम्**—'द्विर्द्विपदास्त्वृचः समामनन्ति' [**उपोद्घाते**] इति ।

षड्गुरुशिष्यः **सूत्रमिदमित्थं व्याचख्यौ**—"ऋचोऽध्ययने त्वध्येतारो द्वे द्वे द्विपद एकैकामृचं कृत्वा समामनन्ति समामनेयुः अधीयीरन् । म्ना अभ्यासे, लिङर्थे लेट्, शपि मनादेशः, द्वे द्विपदे यासां ता ऋचो द्विर्द्विपदाः । समामनन्तीति वचनाच्छंसनादौ न भवन्ति । तेन 'पश्वा न तायुम्'[ऋ० १।६५] इति शंसने दशर्चत्वम्, आसां चाध्ययने पञ्चत्वं भवति" **इति ।**

अयमेवाभिप्रायः प्रथममण्डलान्तर्गतपञ्चषष्टितमसूक्तव्याख्याने सायणेनाप्युपवर्ण्यते—'तत्र पश्वेत्यादीनि षट् सूक्तानि द्वैपदानि । तेष्वध्ययनसमये द्विपदे द्वे द्वे ऋचौ चतुष्पदामेकैकां कृत्वा समाम्नायते । अयुतसंख्यासु तु याऽन्त्यातिरिच्यते, सा तथैवाम्नायते । प्रायेणार्थोऽपि द्वयोर्द्विपदयोरेक एव, प्रयोगे तु ताः पृथक्-पृथक् शंसनीयाः । सूत्र्यते हि—पश्वा न तायुम् (ऋ० १।६५) इति द्वैपदम् (आश्व० ८।१२) इति ।'

चरणव्यूहटीकाकारो महिदासोऽप्याह—'हवन एकैका, अध्ययने द्वे द्वे आमनन्ति' [**पृष्ठ १९**] इति । **यज्ञे शसनं निमित्तं प्राप्य एता द्विपदा भवन्ति अत एव नैमित्तिका द्विपदा उच्यन्ते,**

---

७० चतुष्पदा ऋचाएं हैं। ब्राह्मण ग्रन्थों में '**द्विपदाः शंसति**' आदि वाक्यों द्वारा ये ऋचाएं द्विपदा बनाकर यज्ञ में विनियुक्त की जाती हैं। अतएव इन ७० × २ = १४० ऋचाओं को 'नैमित्तिक द्विपदा' कहा जाता है। इनके विषय में ऋक्सर्वानुक्रमणी के परिभाषा-प्रकरण में इस प्रकार लिखा है—'**द्विर्द्विपदास्त्वृचः समामनन्ति**'।

इस सूत्र की व्याख्या करता हुआ षड्गुरुशिष्य लिखता है—'**ऋचोऽध्ययने**'०—

अर्थात्—ऋचाओं के अध्ययनकाल में अध्येता दो-दो द्विपदाओं को एक-एक ऋचा बनाकर अभ्यास करें। '**समामनन्ति**' कहने से यज्ञान्तर्गत शंसन (स्तुति) काल में दो द्विपदाओं की एक ऋचा नहीं होती है। इसलिये 'पश्वा न तायुम्' (ऋ० १।६५) सूक्त शंसनकाल में दश ऋचाओं का माना जाता है, और ये ही दस ऋचाएं अध्ययनकाल में पांच मानी जाती हैं।

सायणाचार्य ने ऋ० १।६५ के भाष्य में लिखा है—**तत्र पश्वेत्यादि**—

अर्थात्—'पश्वा'० (**ऋ०** १।६५–७०) इत्यादि छः सूक्त द्वैपद हैं। उनमें अध्ययनकाल में दो-दो द्विपदाओं की एक-एक चतुष्पदा ऋचा बनाकर पढ़ी जाती हैं। जिस सूक्त में विषम संख्या-वाली द्विपदाएं हैं, उसमें जो अन्तिम द्विपदा शेष रह जाती है, वह द्विपदारूप में ही पढ़ी जाती है। अर्थ भी प्रायः दो-दो द्विपदाओं का एक ही है। प्रयोग अर्थात् यज्ञकाल में उनका पृथक्-पृथक् द्विपदा-रूप में ही शंसन होता है। आश्वलायन श्रौत (८।१२] में भी 'पश्वा न' (ऋ० १।६५) सूक्त द्विपदारूप से विनियुक्त है।

चरणव्यूह के टीकाकार महिदास ने भी लिखा है—'**हवन एकैका अध्ययने द्वे द्वे आमनन्ति । पृष्ठ १९**'[1]।

---

१. यह पृष्ठसंख्या चौखम्बा संस्कृत सीरीज बनारस के छपे चरणव्यूह के अनुसार हैं।

न तु स्वभावसिद्धा द्विपदाः। एतेनासां चतुष्पदात्वमेव वास्तविकं स्वरूपमित्युक्तं भवति। अर्थोऽप्यासां चतुष्पदानामेव संगच्छते, न द्विपदानाम्।

काश्च ता नैमित्तिकाश्चत्वारिंशदुत्तरशतं द्विपदा इति विवक्षायां महिदास आह—

'पश्वा न तायुम् [१।६५।१-१०] दश, रयिर्न [१।६३।१-१०] दश, वनेष [१।६७।१-१०] दश, श्रीणन् [१।६८।१-१०] दश, शुक्रः शुशुक्वान् [१।६९।१-१०] दश, वनेम पूर्वीः [१।७०।१-१०] दश, अग्ने त्वं नः [५।२४।१-४] चत्वारि, अग्ने भव [७।१७।१-६] षट्, प्र शुक्रैतु [७।३४।१-१०] दश, राजा राष्ट्राणाम् [७।३४।११-२०] दश, क ईं व्यक्ता [७।५६।१-१०] दश, बभ्रुरेको (८।२९।१-१०) दश, परि प्र धन्व [९।१०९।१-१०] दश, तं ते सोतारः [९।१०९।११-१२] द्वादश, इमा नु कम् [१०।१५७।१-४] चत्वारि, आ याहि वनसा [१०।१७२।१-४] चत्वारि, इति नैमित्तिकद्विपदाश्चत्वारिंशोत्तरशतम् (१४०)' [पृष्ठ १८] इति।

नैमित्तिकेतराः सप्तदश नित्या द्विपदा उपलेखसूत्रे [६।१-२] परिगण्यन्ते[1]।

इदमत्रावधेयम्—प्रतिसूक्तमृक्संख्यानिर्देशे कात्यायनेन ऋक्सर्वानुक्रमण्यामिमाः १४० चत्वारिंशदुत्तरशतं नैमित्तिका द्विपदा ऋचो द्विपदात्वेनैव निर्दिष्टाः।

मैक्समूलरीय ऋक्संस्करणे द्विपदा ऋचः

त्रिंशदुत्तरैकोनविंशतितमे (१९३०) वैक्रमाब्दे (सन् १८७३ ई०) मैक्समूलरेणातिपरिश्रमेण संस्कृत्य ऋग्वेदस्य प्रथमं संस्करणं प्रकाशितम्। विद्यमानास्वपि कतिपयासु महतीषु भ्रान्तिषु तदत्युत्तमं संस्करणमित्यत्र नास्ति विवादावसरः।

अर्थात्—हवनकाल में एक-एक द्विपदा पढ़ी जाती है, और अध्ययनकाल में दो-दो द्विपदाएं [एक ऋचा मानी जाती हैं]।

ऋग्वेद में १४० नैमित्तिक द्विपदाएं कौनसी हैं, उनका संग्रह चरणव्यूह के टीकाकार महिदास ने इस प्रकार दर्शाया है—'**पश्वा न तायुम्०**' आदि [देखो—संस्कृत भाग]।

इनके अतिरिक्त १७ नित्य द्विपदाओं का उल्लेख उपलेख सूत्र (वर्ग ६।१-२) में मिलता है।

इस प्रकार ऋग्वेद में समस्त १७+१४०=१५७ नित्य नैमित्तिक द्विपदा ऋचाएं हैं। आचार्य कात्यायन ने ऋक्सर्वानुक्रमणी में प्रतिसूक्त जो ऋक्संख्या लिखी है, उसमें इन १४० नैमित्तिक द्विपदाओं को द्विपदा मानकर ही गिना है, यह हम पूर्व लिख चुके हैं।

मैक्समूलर का ऋक्संस्करण और द्विपदा ऋचाएं

मैक्समूलर ने सं० १९३० (सन् १८७३) में ऋग्वेदमूल का प्रथम संस्करण प्रकाशित किया था। यह संस्करण वस्तुतः उसके महान् परिश्रम का फल है, जो किसी भी सम्पादन-कलाभिज्ञ पाठक से छिपा नहीं है। इतना होते हुए भी निःसंकोच कहना पड़ेगा कि मैक्समूलर के ऋक्संस्करण में कुछ भयङ्कर दोष रह गए हैं। उनमें सबसे महान् दोष नैमित्तिक द्विपदा ऋचाओं के मुद्रण में हुआ है, जिसके कारण उत्तरवर्ती अनेक विद्वानों से भयङ्कर भूलें हुई हैं।

---

१. द्र० चरणव्यूहस्य महिदासस्य व्याख्या (पृ० १८, पं०—१-१५, चौ० सं—सीरिज, काशी, सं० १९९५)।

तत्र मैक्समूलरेण प्रथममण्डले पञ्चषष्टितमसूक्तादासप्ततितमं षष्टिर्नैमित्तिका द्विपदा ऋचश्चतुष्पदीकृत्य त्रिंशन् मुद्रिताः, प्रतिचतुष्पदमपि च मन्त्रसंख्या निर्दिष्टा। पञ्चमे मण्डले चतुर्विंशतितमस्य सूक्तस्य चतस्रो द्विपदाश्चतुष्पदीकृत्य मन्त्रद्वयं मुद्रितम्। तत्र च प्रथमस्यान्ते १।२ एका द्वे च, द्वितीयस्यान्ते ३।४ तिस्रश्चतस्रश्च संख्या निवेशिताः। शिष्टेषु मण्डलेषु परिशिष्टाः षट्सप्ततिर्नैमित्तिका द्विपदा द्विपदात्वेनैव मुद्रिताः। एवं नैमित्तिकद्विपदादामृचां मुद्रणे मैक्समूलरेण त्रयो विकल्पाः समाश्रिताः। तत्र प्रथमः— आद्यमण्डलान्तर्गताः (सू० ६५-७०) षष्टिनैंमित्तिका द्विपदाश्चतुष्पदीकृत्य मुद्रिताः, तथैव च तासु त्रिंशत्संख्या निवेशिता। द्वितीयः—पञ्चममण्डलस्य (सूक्त २४) चतस्रो नैमित्तिका द्विपदाश्चतुष्पदीकृत्य मुद्रिताः, संख्या च प्रतिमन्त्रान्ते द्विपदानुसारिण्येव द्वे द्वे (१।२, ३।४) विधृता। तृतीयः—अवशिष्टाः षट्सप्ततिर्नैमित्तिका द्विपदा द्विपदारूपेणैव मुद्रिता इति। इत्थमनुमिनुमो यन्मैक्समूलरेण नैमित्तिकद्विपदानां स्वरूपमेव सम्यङ् नाज्ञायि।

एतदेवोक्तदोषदूषितं मैक्समूलरीयमृक्संस्करणं प्रमाणीकृत्योपयुञ्जाना बहव आधुनिका विद्वांस ऋक्परिगणने विभ्रान्ता इत्यग्रे वक्ष्यामः।

मैक्समूलर ने अपने मूल ऋग्वेद के संस्करण में मं० १, सूक्त ६५-७० तक की ६० नैमित्तिक द्विपदा ऋचाओं को ३० चतुष्पदा ऋचा बनाकर छापा है, और प्रत्येक चतुष्पदा ऋचा पर मन्त्रसंख्या दी है[1]। पञ्चम मण्डल के २४वें सूक्त को ४ चार द्विपदा ऋचाओं को दो-दो चतुष्पदा ऋचा बनाकर छापा है, परन्तु प्रथम के अन्त में १, २ और द्वितीय के अन्त में ३, ४ संख्या छापी है। शेष मण्डलों की अवशिष्ट ७६ नैमित्तिक द्विपदाओं का द्विपदारूप से ही मुद्रण किया है। इस प्रकार मैक्समूलर ने नैमित्तिक द्विपदा ऋचाओं के मुद्रण में तीन प्रकार आश्रित किए हैं। **प्रथम**—पहले मण्डल ६५-७० सूक्त की ६० नैमित्तिक द्विपदाओं को ३० चतुष्पदा बनाकर छापना, और चतुष्पदा के अनुसार मन्त्रसंख्या देना। **द्वितीय**—पञ्चम मण्डल के २४ वें सूक्त की ४ नैमित्तिक द्विपदाओं को २ चतुष्पदा बनाकर छापना, और उन पर द्विगुणित (द्विपदा के अनुसार) मन्त्रसंख्या देना। **तृतीय**—शेष मण्डलों की ७६ नैमित्तिक द्विपदाओं को द्विपदारूप में छापना।

सम्पादनकला की दृष्टि से यह दोष अक्षम्य है। इससे यह भी विदित होता है कि मैक्समूलर को इन १४० नैमित्तिक द्विपदा ऋचाओं का वास्तविक स्वरूप समझ में नहीं आया था।

मैक्समूलर की उपर्युक्त यह भूल यदि उसके संस्करण तक ही सीमित रहती, तो कुछ विशेष हानि नहीं थी। परन्तु उसके संस्करण को प्रामाणिक मानकर उत्तरवर्ती अनेक विद्वानों से भयङ्कर भूलें हुई हैं (जिनका हम इस लेख में यथास्थान निदर्शन करायेंगे)। अतः उसे किसी प्रकार क्षम्य नहीं कहा जा सकता।

---

१. मैक्समूलर सम्पादित ऋग्वेद सायण भाष्य के द्वितीय संस्करण (सन् १८९०) में प्रति चतुष्पदा ऋचा के आगे दुगुनी संख्या (१। २॥ ३।४॥ ५। ६॥ इत्यादि) उपलब्ध होती है, जो ठीक है। सायण-भाष्य के प्रथम संस्करण में मन्त्रसंख्या किस प्रकार छपी थी, यह हमें ज्ञात नहीं। क्योंकि हमें उसका प्रथम संस्करण देखने को प्राप्त नहीं हुआ।

अनुवाकानुक्रमण्युक्ता ऋक्संख्याः

शौनकेनानुवाकानुक्रमण्यामृक्संख्या द्विरलेखि । तत्र तावत् प्रतिवर्गान्तर्गतऋक्संख्यानुसारं वर्गान् निदर्शयन्नाह—

एकर्च एकवर्गः (१) स्यादेकश्च (१) नवकस्तथा ।
द्वौ (२) वर्गौ तु द्वृचौ ज्ञेयौ त्र्यूनं तृचशतं (९७) स्मृतम् ॥४०॥
चतुष्कं शतमेकं च चत्वारः सप्ततिस्तथा (१४७) ।
पञ्चकानां सहस्रं तु द्वे च सप्तोत्तरे शते (१२०७) ॥४१॥
त्रीणि शतानि षट्कानां चत्वारिंशत् षट् च (३४६) वर्गाः ।
शतमूनविंशतीः (११९) सप्तकानां न्यूनाषष्टिर् (५९) अष्टकानाम् ॥४२॥

एषा गणनैव विस्पष्टं प्रतिपत्तव्या—

प्रतिवर्गमृक्संख्या		वर्गसंख्या		समस्तऋक्संख्या
१	×	१	=	१
२	×	२	=	४
३	×	९७	=	२९१
४	×	१७४	=	६९६
५	×	१२०७	=	६०३५
६	×	३४६	=	२०७६
७	×	११९	=	८३३
८	×	५९	=	४७२
९	×	१	=	९
योगः		२००६		१०४१७

एवमाहत्यर्ग्वेदे (२००६) षडधिकद्विसहस्रं वर्गाः, (१०४१७) सप्तदशाधिकचतुःशतोत्तर-दशसहस्रमृचो भवन्ति । सैषा ऋक्संख्या शाकलचरणान्तर्गतायाः शैशिरीयसंहिताया बोध्या, 'तान् पारणे शाकले शैशिरीये वदन्ति (३६)' **इत्युपक्रमस्योक्तवर्गसंख्यानिर्देशात् । अत्र बाल-**

अनुवाकानुक्रमणी और ऋक्संख्या

शौनक ने अपनी अनुवाकानुक्रमणी में दो स्थानों पर ऋक्संख्या का निर्देश किया है। श्लोक ४०, ४१, ४२ में वर्गसंख्या का निर्देश करता हुआ वह लिखता है—'**एकर्च एकवर्गः**'। इन श्लोकों का स्पष्टीकरण ऊपर संस्कृत भाग में दर्शाया है।

तदनुसार ऋग्वेद में २००६ वर्ग और १०४१७ ऋचाएं होती हैं। शौनक के मतानुसार यह ऋक्संख्या शाकल चरणान्तर्गत शैशिरीय शाखा की है। वह लिखता है—'**तान् पारणे शाकले शैशिरीये वदन्ति**' (३६)। इस संख्या में बालखिल्य ऋचाएं सम्मिलित नहीं हैं. और नैमित्तिक

खिल्या ऋचो न संकलिताः, न चापि नैमित्तिका द्विपदा द्विपदात्वेन परिगणिताः। वर्तमानाया-मृक्संहितायामपि बालखिल्या ऋचो विहाय वर्गाः (२००६) षडुत्तरद्विसहस्रमेव, परं मन्त्रसंख्या तु भिद्यते, तत्र मन्त्रा (१०४०२) द्व्यधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रसंमिता एवोपलभ्यन्ते। एतत् पञ्चदश-मन्त्राधिक्यं शाखाभेदकृतमित्यनुमिनुमः। न चानुवाकानुक्रमण्यां पञ्चदश मन्त्राधिक्यं दृष्ट्वा संज्ञानसूक्त-स्थाः पञ्चदश मन्त्रा अत्र संकलिता इत्यूहनीयम्। तेषां संकलने हि तत्सूक्तस्य चत्वारो वर्गा अपि संगृहीताः स्युः। तथा सति वर्गसंख्या षडधिकद्विसहस्रस्थाने दशाधिकद्विसहस्रं भवेत्। अतः क एते पञ्चदश मन्त्राः, कुत्र-कुत्र चैते पठिता इति न शक्यते ज्ञातुम्, तथाविधस्य निर्देशस्याभावात्। तदनन्तरं च—

ऋचां दश सहस्राणि ऋचां पञ्च शतानि च। ऋचामशीतिः पादश्च पारणं संप्रकीर्तितम् ॥

इत्यनेन श्लोकेन १०५८० अशीत्यधिकपञ्चशतोत्तरदशसहस्रमृचः पादश्चैक इति पारणे ऋक्संख्या दर्शयति।

इयं संख्या पूर्वनिर्दिष्टसंख्यातो नितरां भिद्यते। तत्रैवं समन्वयः—अस्मिन् श्लोके पारण-शब्देन तत्रभवाञ्छौनकाचार्यः शाकलचरणान्तर्वर्तिसर्वशाखागतानामृचां परिमाणं प्रतिपादयति। तथा चोक्तं लौगाक्षिस्मृतौ—

ऋचां दश सहस्राणि ऋचां पञ्च शतानि च। ऋचामशीतिः पादश्च पारायणविधौ खलु ॥
पूर्वोक्तसंख्यायाश्चेत्तु सर्वशाखोक्तसूत्रगाः। मन्त्राश्चैव मिलित्वैत्र कथनं चेति तत्पुनः ॥ **इति**
['वैदिक वाङ्मय का इतिहास' ग्रन्थे उद्धृतौ, भाग १, पृ० १३४]

द्विपदाओं का भी द्विपदारूप में परिगणन नहीं है। वर्तमान ऋग्वेद में बालखिल्य ऋचाओं को छोड़कर वर्गसंख्या २००६ ही है, परन्तु मन्त्र-संख्या १०४०२ है (यह हम आगे दर्शायेंगे)। इस प्रकार इसमें जो १५ ऋचाओं की अधिकता है[1], वह शाखाकृत समझनी चाहिए।

इसके आगे वह पूर्वोद्धृत **'ऋचां दश सहस्राणि'** श्लोक पढ़ता है। तदनुसार ऋग्वेद में १०५८० ऋचाएं और एक पाद है। यद्यपि इन दोनों स्थानों पर कही हुई ऋक्संख्याओं में महती भिन्नता है, तथापि इसका समाधान बहुत साधारण है। 'ऋचां दश सहस्राणि' श्लोक में 'पारणम्' पद विशेष ध्यान देने योग्य है। शौनक ने 'पारणम्' शब्द-द्वारा १०५८० और १ पाद ऋक्परिमाण ऋग्वेद की समस्त शाखान्तर्गत ऋचाओं को दर्शाया है। यह लौगाक्षिस्मृति के निम्नलिखित श्लोकों के साथ तुलना करने पर स्पष्ट विदित हो जाता है। यथा—**'ऋचां दश०'**—

इन श्लोकों में १०५८० और १ पाद ऋक्परिमाण दर्शाकर स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि यह संख्या सर्वशाखोक्त मन्त्रों की है। यद्यपि इन श्लोकों का पाठ अत्यन्त भ्रष्ट है, तथापि उपर्युक्त अभिप्राय सर्वथा स्पष्ट है।

---

१. १५ संख्या का आधिक्य देखकर शैशिरि शाखा में संज्ञान सूक्त के समावेश की कल्पना नहीं करनी चाहिये। क्योंकि संज्ञानसूक्त का समावेश होने पर उसके चार वर्गों का भी वर्गसंख्या में समावेश होगा। वैसा होने पर वर्गसंख्या २००६ न होकर २०१० हो जायेगी। अनुवाकानुक्रमणी में वर्गसंख्या २००६ ही लिखी है।

शौनकोक्तमन्त्यमृङ्मानं चरणव्यूहपरिशिष्टेऽपि निर्दिश्यते । तथा हि—

ऋचां दश सहस्राणि ऋचां पञ्चशतानि च । ऋचामशीतिः पादश्चैतत् पारायणमुच्यते ॥

[पृष्ठ १४] इति ।

श्लोकमेनं विवृण्वन् महीदासः १०५८० अशीत्यधिकपञ्चशतोत्तरदशसहस्रमृचः पादश्चैक इत्यृङ्मानमित्थमुपपादयाञ्चकार—

'एतत् पारायणं बालखिल्यैर्विना संख्यातम् । बालखिल्यानि पारायणे न सन्ति' [पृ० १७] ।

'अथाध्ययने ऋक्संख्योच्यते—षण्णवत्यधिकचतुःशतदशसहस्राणि (१०४९६), ता नैमित्तिकद्विपदाश्चत्वारिंशदुत्तरशतसहिता दशसहस्राणि (षट्षष्ट्यधिकपञ्चशतानि) १०५६६, संज्ञानमुशना वदत् सूक्तस्य पञ्चदश ऋच एकीकृत्य १०५८० एवं पारायणे ऋक्संख्या । ऋचां दशसहस्राणीति वचनस्य संख्या पूर्णा भवतीत्यर्थः । एका उर्वरिता, सा 'भद्रं नो अपि वातय मनः' [ऋक् १०।२०।१] इति पादाधिक्यम्" [पृ० २१] इति ।

सन्त्यृग्वेदे कतिपया ऋचो यासु त्रयोऽर्धर्चाः श्रूयन्ते,[1] ताश्च महिदासेन चरणव्यूहटीकायां

चरणव्यूह-परिशिष्ट में लिखा है—**'ऋचां दश०'**—

महीदास १०५८० और १ पाद ऋक्संख्या की उपपत्ति इस प्रकार दर्शाता है—**'एतत्०'**—

अर्थात्—अध्ययनकाल की १८५८० और एक पाद संख्य कहते हैं –१०४९६ ऋचाएं हैं, उनमें नैमित्तिक द्विपदा की (अधिक ७०) संख्या जोड़ने पर १०५६६ ऋचाएं होती हैं । संज्ञान सूक्त की १५ ऋचाएं[2] मिलाने पर १०५८० संख्या पूरी हो जाती है । एक संख्या बचती है, वह है **'भद्रं नो अपि वातय मनः'** (ऋक् १० । २०।१) एक पाद ।

यहां पर महीदास ने १०४०२ ऋचाओं में ९४ संख्या अधिक जोड़ कर १०४९६ संख्या गिनी है । इस ९४ संख्या की उपपत्ति इस प्रकार है—

ऋग्वेद में ९४ ऋचाएं ऐसी हैं, जिनमें तीन-तीन अर्धर्च हैं ।[3] अध्ययनकाल में उनके दो

---

१. द्रष्टव्यैतत्पृष्ठस्था तृतीया टिप्पणी ।

२. महिदास ने १०५८० और १ पादसंख्या की उपपत्ति में संज्ञान सूक्त की जो १५ ऋचायें गिनी हैं, वह ठीक नहीं, क्योंकि अनुवाकानुक्रमणी में संज्ञान सूक्त के बिना ही १०४१७ मन्त्र कहे हैं । देखो पूर्व पृष्ठ ७०५ ।

३. महिदास ने उनका परिगणन इस प्रकार दर्शाया है—आसां परिगणनमाह—'अग्नि होतारम्' (अष्ट० २, अ० १, वर्ग १२, इसी प्रकार आगे भी समझें) पञ्च, 'स हि शर्धो न' (२।१।१३) षड्, 'अयं जायत' (२।१।१४) पञ्च, 'विश्वो विहायाः' (२।१।१५) तिस्रः, 'यं त्वं रथम्' (२।१।१६) पञ्च, 'प्र तद् वोचेयम्' (२।२।१७) षट्, इन्द्र पाह्युप नः' (२।१।१८) पञ्च, 'इमां ते वाचम्' (२।१।१९) चत्वारि, 'स नो नव्येभि' (२।१।१९) वर्जम् । 'इन्द्राय हि द्यौः' (२।१।२०) सप्त, 'त्वया वयम्' (२।१।२१) षट्, 'अवर्म ह' (२।१।२२) एका, 'वनोति हि' (२।१।२२) एका, 'आ त्वा जुवो' (२।१।२३) षट्, 'स्तीर्णम्' (२।१।२४) पञ्च, 'इमे वां सोमा' (२।१।२५) एका, 'इमे ये ते सु वायो वा' (२।१।२५) एका, 'प्र सुज्येष्टम्' (२।१।२६) षट्, 'ऊती देवानाम्' (२।१।२६) वर्जम् । 'सुषुमायातम्' (२।२।१) त्रीणि, 'प्र प्र पूष्णः' (२।२२) चतुष्कम्, 'अस्तु श्रौषट्'

(पृष्ठ १६,२०) चतुर्नवतिः परिगणिताः । तासामध्ययने द्वयोरर्धर्चयोरेकामृचं कृत्वा परिशिष्टमेकमर्धर्चं चैकामृचं मत्वा परिगणनं क्रियते । तथा सति चतुर्नवतिऋचामष्टाशीत्युत्तरं शतमृचः संपद्यन्ते । तदेवमृचां योगः—१०४०२ द्वयधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रमृचो बालखिल्यरहिताः ९४ चतुर्नवतिसंख्या च त्र्यर्धर्चानामृग्द्वयकल्पनयोत्पन्ना, नैमित्तिकद्विपदानां द्विपदारूपेण परिगणनाद् विवृद्धा ७० सप्ततिसंख्या, संज्ञानसूक्तं च पञ्चदशर्चम् । एवं १०५८१ एकाशीत्यधिकपञ्चशतोत्तरदशसहस्रमृचः संजाताः । तत्र—'भद्रं नो अपि वातय मनः' [ऋ० १० । २० । १] इत्येकपदा ऋक् ।

महीदासोक्तोपपत्तौ स्तो द्वे भ्रान्ती । तत्र प्रथमा—महीदासेनात्र—'अध्ययने ऋक्संख्योच्यते' इत्युपक्रम्यापि नैमित्तिका त्रिपदा द्विपदात्वेन परिगणिताः । न च ता अध्ययने द्विपदात्वेन गण्यन्ते, किन्तर्हि चतुष्पदात्वेनेत्युक्तं पुरस्तात् । सिद्धान्तितं च तेन स्वयमेवान्यत्र—'हवन एकैका, अध्ययने द्वे द्वे' इति, 'तास्त्वृचोऽध्ययने चतुष्पदा कृत्वेत्यर्थः' [पृष्ठ १६] इति च । द्वितीया च—अनुवाकानुक्रमण्यां शौनकेन या १०४१७ सप्तदशाधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रमृचः पारायणे परिगणितास्तासु संज्ञानसूक्तस्थपञ्चदशर्चां सन्निवेशो नास्तीत्युक्तं पुरस्तात् । अतोऽत्र संज्ञानसूक्तगतानामृचां संकलनमपि चिन्त्यम् ।

छन्दःसंख्यापरिशिष्टोक्ता ऋग्गणना

अस्ति कस्याश्चिदृक्शाखायाः एकादशश्लोकात्मकं छन्दःसंख्यासंज्ञकं परिशिष्टम् । तत्र चेमे श्लोकाः—

एकपञ्चाशद् ऋग्वेदे गायत्र्यः शाकलेयके । सहस्रं द्वितयं चैव चत्वार्येव शतानि तु ॥१॥
त्रीणि शतानि सैकानि चत्वारिंशत्तथोष्णिहः । अनुष्टुभां शतान्यष्टौ पञ्चाशत् पञ्चसंयुताः ॥२॥
बृहतीनां शतं ज्ञेयमेकाशीत्यधिकं बुधैः । शतानि त्रीणि पङ्क्तीनां द्वादशाभ्यधिकानि तु ॥३॥

अर्धर्च की एक ऋचा और एक अर्धर्च की एक ऋचा गिनी जाती है । इस प्रकार ९४ ऋक्संख्या की वृद्धि हो जाती है ।

महीदास की इस गणना में दो भूलें हैं । **प्रथम**—महीदास ने 'अध्ययन में ऋक्संख्या कहते हैं' ऐसा लिखकर भी उसमें नैमित्तिक द्विपदाओं की गणना कर ली । उसने स्वयं अध्ययनकाल में चतुष्पदा माना है । **दूसरी**—शौनक ने अनुवाकानुक्रमणी में जो १०४१७ ऋचाएं परायण में गिनी हैं, उनमें संज्ञान सूक्तस्थ १५ ऋचाओं का सन्निवेश नहीं है, यह पहले दर्शा चुके हैं ।

छन्दःसंख्या-परिशिष्ट और ऋग्गणना

ऋग्वेद की किसी शाखा का छन्दःसंख्यासंज्ञक एक प्राचीन परिशिष्ट उपलब्ध होता है ।

(२।२।३) चत्वारि, 'शुचिभिर्नः' (२।२।३) वर्जम् । 'वृषन्निन्दु' (२।२।४) पञ्च, 'ये देवासो' (२।२।४) वर्जम् । 'तवत्यन्नर्यम्', (२।६।२८) 'एका सखे सखायम' (३।४।१२) एका, 'अया रुचा' (७।५।२३) त्रीणि, एतास्त्रीणि त्रीण्यर्धर्चा ऋचा हवनीयाश्चतुर्नवतिसंख्या । इति त्रीण्यर्धर्च ऋग्घवने । अध्ययने अर्धर्चं द्वयेन ऋगेका, अर्धर्चेनैकैव ऋग्द्वये कर्तव्य इत्यर्थः । चरणव्यूह पृष्ठ १६, २० ।

पञ्चाशत् त्रिष्टुभः प्रोक्तास्तिस्रश्चैव ततोऽधिकाः । सहस्राण्येव चत्वारि विज्ञेयं तु शतद्वयम् ॥४॥
चत्वारिंशत्तथाष्टौ च तथा चापि शतत्रयम् । जगतीनामियं संख्या सहस्रं तु प्रकीर्तितम् ॥५॥
दशैवातिजगत्योऽपि तथा सप्त न संशयः । शक्वर्योऽपि तथैवोक्तास्तथा नव विचक्षणैः ॥६॥
नव चैवातिशक्वर्यः षडष्टयः प्रकीर्तिताः । अशीतिश्च चतस्रश्च तथात्यष्टिऋचः स्मृताः ॥७॥
धृतिद्वयं विनिर्दिष्टमेकातिधृतिरेव च । एकपदास्तु षट् प्रोक्ता द्विपदा दश सप्त च ॥८॥
प्रगाथा बार्हता येऽत्र तेषां शतमुदाहृतम् । चतुर्नवतिरेवोक्तास्तद्वद् [1]द्वृचास्त्वसंशयाः ॥९॥
काकुभानां तु पञ्चाशद् विज्ञेयाः पञ्चसंयुताः । महाबार्हत ऐवैकः एवं सार्धशतद्वयम् ॥१०॥
एवं दशसहस्राणि शतानां तु चतुष्टयम् । ऋचां द्व्यधिकमाख्यातमृषिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥११॥ इति

एष्वन्त्यं विहाय दशसु श्लोकेषु गायत्र्यादिच्छन्दोऽनुसारं या ऋक्संख्या परिगणिता, तदनुसारम्—

गायत्र्यः—२४५१ **एकपञ्चाशदधिकचतुःशतोत्तरद्विसहस्रम् । उष्णिहः**—३४१ एकचत्वारिंशदधिकं त्रिशतम् । अनुष्टुभः—८५५ **पञ्चपञ्चाशदधिकाष्टशतम्** । बृहत्यः—**१८१ एकाशीत्यधिकैकशतम्** । पङ्क्तयः—**३२१ त्रीणि शतानि द्वादश च** । त्रिष्टुभः—४२५३ **चत्वारि सहस्राणि द्वे शते त्रिपञ्चाशच्च** । जगत्यः—**१३४८ अष्टचत्वारिंशदधिकत्रिशतोत्तरैकसहस्रम्** । अतिजगत्यः—**१७ सप्तदश** । शक्वर्यः—**१९ एकोनविंशतिः** । अतिशक्वर्यः—**९ नव** । अष्टयः—६ **षट्** । अत्यष्टयः—८४ **चतुरशीतिः** । धृती—२ **द्वे** । अतिधृतिर्—१ **एका** । एकपदाः—६ **षट्** । द्विपदाः—१७ **सप्तदश** । बार्हथाः प्रगाथाः—१९४ **चतुर्नवत्यधिकशतम्** । काकुभाः प्रगाथाः—**५५ पञ्चपञ्चाशत्** । महाबार्हतः प्रगाथः—**१ एकः** ।

एषु २५० सार्धद्विशतप्रगाथा द्वृचास्तेषां ५०० पञ्चशतमृचः । तत्संकलय्यैकादशे श्लोके १०४०२ द्व्यधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रमृचः शाकलेयक ऋग्वेदे परिसंख्याताः ।

इसमें केवल ११ श्लोक हैं। प्रारम्भ के दश श्लोकों में गायत्र्यादि पृथक्-पृथक् छन्दों के अनुसार ऋक्संख्या का उल्लेख किया है। तत्पश्चात् अन्तिम श्लोक में सामूहिक रूप से ऋक्संख्या का निर्देश है। वे श्लोक इस प्रकार हैं—**एकपञ्चाशद्०**—

इन श्लोकों के अनुसार ऋग्वेद में **गायत्री** २४५१, **उष्णिक्** ३४१, **अनुष्टुभ्** ८५५, **बृहती** १८१, **पंक्ति** ३१२, **त्रिष्टुप्** ४२५३, **जगती** १३४८, **अतिजगती** १७, **शक्वरी** १९, **अतिशक्वरी** ९, **अष्टि** ६, **अत्यष्टि** ८४, **धृति** २, **अतिधृति** १, **एकपदा** ६, **द्विपदा** १७, **बार्हतप्रगाथ** १९४, **काकुभ प्रगाथ** ५५, **महाबार्हत प्रगाथ** १ छन्द हैं। **इस** प्रकार तत्त्वदर्शी महर्षियों ने ऋग्वेद की समस्त ऋचाओं की संख्या १०४०२ कही है।

---

१. द्वृचशब्दे पाणिनीयव्याकरणेन साक्षादप्रतिपादितोऽपीकारलोपः पृषोदरादित्वाद् द्रष्टव्यः । तस्य च विकल्पाद् द्व्यृचशब्दोऽप्युपपद्यते । त्रेश्च रेफेकारयोर्नित्ये लोपे तृच इत्येव भवति ।

एतद्वसंख्यापरिसंख्यानविषये पण्डितसत्यव्रतसामश्रमिणा स्वीय ऐतरेयालोचन एवमलेखि—

'छन्दःसंख्योल्लिखितोक्तसर्वसंकलनसंख्या तु प्रतिच्छन्दःसंख्यातोऽपि विरुद्धैव प्रतीयते। तद्यथा तत्रोक्तं श्लोकैः—गायत्र्यः २४५१, उष्णिहः ३४१, अनुष्टुभः ८५५, बृहत्यः १८१, पङ्क्तयः ३१२, त्रिष्टुभः ४२५३, जगत्यः १३४८, अतिजगत्यः १७, शक्वर्यः ९, अतिशक्वर्यः ९, अष्टयः ६, अत्यष्टयः ८४, धृत्यौ २, अतिधृतिः १, द्विपदाः १७, एकपदाः ६, बार्हतप्रगाथाः १९४, ककुप्प्रगाथाः ५५, महाबार्हतप्रगाथः १। तदेवं तदुक्तप्रतिच्छन्दःसंख्यानां संकलनया १०१४२ (द्विचत्वारिंशदधिकशतोत्तरदशसहस्रम्) ऋचः स्युः। पूर्वप्रदर्शितश्लोकतस्तु ग्रन्थान्ते १०४०२ (द्व्यधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रम्)। तदत्र प्रायः सर्वत्र संकलनभ्रमोऽस्माभिर्ग्रन्थदृष्ट्या प्रमाणित एव' [पृ० १४३] इति।

अत्र महापण्डितस्यापि सामश्रमिमहाभागस्य द्विविधो भ्रमोऽभूत्। प्रथमः—**षष्ठश्लोकस्योत्तरार्धे 'तथा' पदं द्विरुक्तम्। तत्राद्यं पूर्वार्धगताया अतिजगतीगणनाया निर्देशकम्, अपरं प्रागुक्ताया दशसंख्यायाः समुच्चायकम्। तत्रातिजगतीवच्छक्वरीछन्दांस्यपि गणनीयानीत्यभिप्रेयते। सामश्रमिमहोदयेन पुनस्तदपरिज्ञायैकोनविंशतिस्थाने नवैव शक्वर्यः परिगणिताः।** द्वितीयश्च—**नवमे श्लोके विस्पष्टं प्रगाथाः द्वृचा उक्ताः। अतस्तेषां २५० सार्धद्विशतप्रगाथानां पञ्चशतमृचः संपद्यन्ते। ऋक्सर्वानुक्रमण्याः परिभाषाप्रकरणेऽपि—'बृहतीसतोबृहत्यौ बार्हतः, ककुप् चेत् पूर्वा काकुभः, महाबृहतीमहासतोबृहत्यौ महाबार्हतः' इत्यादिसूत्रैर्व्यक्तं द्वृचानां प्रगाथत्वमुच्यते।**

छन्दःसंख्या-परिशिष्ट में उल्लिखित ऋग्गणना के विषय में पं० सत्यव्रत सामश्रमी ने ऐतरेयालोचन पृष्ठ १४३ पर लिखा है—**'छन्द संख्यो०'**—

अर्थात्—छन्दःसंख्या नाम के परिशिष्ट में कही हुई सब छन्दों की संकलन-संख्या (पूर्णयोग) प्रतिच्छन्द दर्शाई हुई छन्दःसंख्या के संकलन (योग) से विरुद्ध ही प्रतीत होती है। जैसा कि श्लोकों में कहा है—गायत्री २४५१··· शक्वरी ९······ इस प्रकार प्रतिच्छन्द-निर्दिष्ट संख्याओं का संकलन करने से १०१४२ ऋचाएं होती हैं। पूर्वप्रदर्शित (११वें) श्लोक से १०४०२ संख्या जानी जाती है। इस तरह सर्वत्र संकलन-भ्रम हमने ग्रन्थों से प्रमाणित कर दिया।

पं० सत्यव्रत सामश्रमी ने इन श्लोकों के समझने में दो भूलें की हैं। **प्रथम** भूल—छठे श्लोक के उत्तरार्द्ध में दो बार **'तथा'** शब्द का प्रयोग है। पहला 'तथा' शब्द पूर्वार्धगत अतिजगती की गणनाप्रकार का निदर्शक है। दूसरा 'तथा' शब्द पूर्वोक्त १० संख्या का समुच्चायक है। श्लोक का भाव यह है—जैसे अतिजगती की संख्या १०+७=१७ कही है, वैसे ही शक्वरी की गणना में भी पूर्वसंख्या १० और उत्तर संख्या ९ समझनी चाहिए, अर्थात् शक्वरी छन्द की १०+९=१९ ऋचाएं हैं। पं० सत्यव्रत सामश्रमी ने **'शक्वर्योऽपि तथैवोक्ताः'** चरण का भाव न समझकर शक्वरी छन्द की केवल ९ ऋचाएं गिनी हैं। **द्वितीय भूल**—प्रगाथों की संख्या का निर्देश करते हुए ९वें श्लोक में स्पष्ट कहा है कि ये प्रगाथ='द्वृच' हैं। अतः इन १९४+५५+१=२५० प्रगाथों की ५०० ऋचाएं गिननी चाहिए। ऋक्सर्वानुक्रमणी के परिभाषा प्रकरण में स्पष्ट कहा है कि बार्हत प्रगाथ=बृहती और सतोबृहती, काकुभ प्रगाथ=ककुप् और सतोबृहती, तथा महाबार्हतप्रगाथ=महाबृहती और महासतोबृहतीसंज्ञक छन्दों के योग का नाम

भगवता पाणिनिनाऽपि—'सोऽस्यादिरिति च्छन्दसः प्रगाथेषु' (अ० ४। २। ५५) इति सूत्रयता प्रगाथानामनेकर्चत्वं प्रत्यपादि । तदविज्ञायैव सामश्रमिणा सार्धद्विशतप्रगाथानां सार्धद्विशतर्च एव परिगणिताः ।

पण्डितहरिप्रसादोऽपरनामा वैदिकमुनिरपि स्वीये वैदिकसर्वस्वग्रन्थे इत्थमेवाविचार्य सामश्रमिणमनुससार ।

छन्दःसंख्यापरिशिष्टोक्तगणनायां चत्वारिंशदुत्तरशतं नैमित्तिका द्विपदा ऋचश्चतुष्पदीकृत्य सप्तसप्ततिर्मताः । यास्त्वत्र सप्तदश द्विपदाः स्मर्यन्ते, ता नित्या द्विपदाः । इत्थं द्विपदापक्षे सप्त-त्यृचो द्विगुणीकृत्य परिगणने १०४७२ द्विसप्तत्यधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रमृचो भवन्ति । अत्र बालखिल्यानामशीतिऋचां सन्निवेशो न विद्यते । कदाचिच्छन्दःसंख्यापरिशिष्टं शाकलचरणा-न्तर्गतायास्तादृशशाखायाः स्यात्, यस्यां बालखिल्या ऋचो न स्युः । शैशिरीयशाखायास्तु नेदं संभवतीति विस्पष्टमेव, यतोऽनुवाकानुक्रमण्यनुसारं तत्र पञ्चदशर्चोऽधिकाः (१०४१७) विद्यन्ते ।

प्राध्यापकमैकडानलडेन १२७ द्विपदा परिगणिताः । ते छन्दःसंख्यापरिशिष्टोक्तानां द्विपदां १७ संख्यां दृष्ट्वा (या नित्यद्विपदानां वर्तते) कल्पितं यदत्र १७ संख्यायां मध्यवर्ती २ द्वयङ्को नष्टः ।

है। पाणिनि के 'सोऽस्यादिरितिच्छन्दसः प्रगाथेषु' (अष्टा० ४।२।५५) सूत्र से बार्हत काकुभ आदि में अण्-प्रत्यय इसी अर्थ में होता है। पं० सत्यव्रत सामश्रमी ने इस साधारण सी बात को न समझ कर २५० प्रगाथों की २५० ऋचायें ही गिन लीं। दोष है अपनी समझ का, और मत्थे मढ़ा छन्दःसंख्या-परिशिष्टकार के। यदि पं० सत्यव्रत सामश्रमी की इन दोनों त्रुटियों को ठीक कर लिया जाए, तो छन्दःसंख्या-परिशिष्ट की दोनों गणनाओं में परस्पर कोई विरोध नहीं रहता।

पं० हरिप्रसाद जी वैदिकमुनि ने भी छन्दःसंख्या-परिशिष्टोक्त ऋग्गणना को नहीं समझा। उन्होंने पं० सत्यव्रत सामश्रमी का ही अनुकरण किया है। देखो—'वेदसर्वस्व' पृष्ठ ६५, ६६। अतः उनके लेख में भी पूर्वोक्त दोष समझने चाहियें।

छन्दःसंख्यापरिशिष्ट और द्विपदा ऋचाएं

ध्यान रहे कि छन्दःसंख्या-परिशिष्टोक्त १०४०२ ऋचाओं में १४० नैमित्तिक द्विपदाएं चतुष्पदा बनाकर ७० ऋचाएं गिनी गई हैं। अत एव यहां जो १७ द्विपदाएं गिनी हैं, वे नित्य द्विपदाएं हैं। यदि ७० चतुष्पदाओं को ७०×२=१४० द्विपदा बनाकर गिना जाए, तो कुल ऋक्संख्या १०४७२ होगी। इसी प्रकार छन्दःसंख्या-परिशिष्टोक्त ऋग्गणना में ८० बालखिल्य मन्त्रों का भी समावेश नहीं है। सम्भव है छन्दःसंख्या-परिशिष्ट शैशिरिशाखा का हो। हम पूर्व लिख चुके हैं कि शैशिरिशाखा में बालखिल्य ऋचाएं सम्मिलित नहीं है।

प्रो० मैकडानल्ड ने ऋग्वेद में १२७ द्विपदा ऋचाएं गिनी हैं (उनकी गणना में जो भूल है, उसे आगे व्यक्त किया जाएगा)। उन्होंने छन्दःसंख्या परिशिष्ट में द्विपदाओं की १७ संख्या देखकर कल्पना की है कि छन्दःसंख्या-परिशिष्टोक्त द्विपदा संख्या में मध्यवर्ती २ की संख्या नष्ट हो गई है। अर्थात् १२७ के स्थान में भूल से १७ लिखी गई। देखो—ऋक्सर्वानुक्रमणी की भूमिका पृष्ठ १८।

ऋक्सर्वानुक्रमण्युक्ता ऋक्संख्या

अस्ति कात्यायनीयर्क्सर्वानुक्रमण्या द्विविधः पाठः । एकत्र बालखिल्यसूक्तानामृषिदैवतच्छन्दसां निर्देशो नोपलभ्यतेऽपरत्र च दृश्यते । तत्र सर्वानुक्रमणीव्याख्याता षड्गुरुशिष्यः प्रथमं पाठमनुससार, पण्डितजगन्नाथस्तु द्वितीयम् । तत्र प्रथमपाठानुसारं बालखिल्यऋचो विहाय कात्यायनोक्तानां प्रतिसूक्तर्क्संख्यानां संकलने (१०४७२) द्विसप्तत्यधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रमृचो भवन्ति । द्वितीयपाठानुसारं बालखिल्यानामृचां परिगणने (१०५५२) द्विपञ्चाशदधिकपञ्चशतोत्तरदशसहस्रमृचः सम्पद्यन्ते । अयमेव च सर्वानुक्रमणीटीकाकृतो जगन्नाथस्य पक्षः । अत्रोभयथा पाठेऽपि नैमित्तिका द्विपदा द्विपदारूपेण परिगणिताः । चरणव्यूहव्याख्याता महीदासोऽप्याह—

'बालखिल्यसहिता सर्वानुक्रमणीयमन्त्ररूपी संख्या उच्यते द्विपञ्चाशदधिकपञ्चशतदशसहस्रम् १०५५२ । बालखिल्यव्यतिरिक्तसंख्या तु द्विसप्तत्यधिकचतुःशतदशसहस्रमृक् १०४७२ । एतत्संख्या नित्यद्विपदानैमित्तिकद्विपदासहिता [पृ० १७]' इति ।

प्रो० मैकडानल्ड की यह कल्पना सर्वथा अयुक्त है। क्योंकि हम ऊपर सप्रमाण दर्शा चुके हैं कि ऋग्वेद में १४० नैमित्तिक द्विपदाएं हैं, और १७ नित्य द्विपदाएं हैं। छन्दःसंख्या-परिशिष्ट में केवल नित्य द्विपदाओं का उल्लेख है, नैमित्तिक द्विपदाओं का उल्लेख नहीं है। मैकडानल्ड ने स्वयं अशुद्ध गिनी हुई १२७ द्विपदा संख्या में छन्दःसंख्या-परिशिष्टोक्त १७ द्विपदा संख्या में आद्यन्त संख्या (१ और ७) की समानता देखकर आश्चर्यजनक कल्पना की है।

ऋक्सर्वानुक्रमणी और ऋक्संख्या

आचार्य कात्यायन ने ऋक्सर्वानुक्रमणी में प्रतिसूक्त जो ऋक्संख्या लिखी है, उसका योग करने पर बालखिल्य सूक्तों के विना १०४७२ ऋचाएं होती हैं[1]। ११ बालखिल्य सूक्तों के ८० मन्त्र मिलाने पर १०५५२ ऋक्संख्या उपलब्ध होती है। इस संख्या में नैमित्तिक द्विपदाएं सम्मिलित हैं। ऋक्सर्वानुक्रमणी के टीकाकार जगन्नाथ के मत में भी ऋग्वेद में १०५५२ ऋचाएं हैं।[2] चरणव्यूह के टीकाकार महीदास का भी यह निर्णय है। वह लिखता है—'बालखिल्यसहिता०'।

अर्थात्—बालखिल्य-सहित सर्वानुक्रमणी-निर्दिष्ट मन्त्रसंख्या १०५५२ है, बालखिल्य ऋचाओं के विना १०४७२। इस संख्या में नित्य और नैमित्तिक दोनों प्रकार की द्विपदा ऋचायें सम्मिलित हैं।

---

१. ऋक्सर्वानुक्रमणी के दो प्रकार के पाठ उपलब्ध होते हैं। एक पाठ में बालखिल्य ऋचाओं के ऋषि देवता, छन्द का निर्देश मिलता है, दूसरे पाठ में नहीं मिलता। अत एव यहां पृथक् निर्देश किया है।

२. ऐतरेयालोचन पृष्ठ १४२, १४३।

वेङ्कटमाधवीया ऋग्गणना

वैक्रमाब्दस्य द्वादशशताब्द्यां लब्धजनिमा वेङ्कटमाधव ऋग्वेदस्य लघुभाष्यस्य[1] पञ्चमाष्टकस्य पञ्चमाध्यायस्योपोद्घात ऋग्वेदीयर्चां संख्यामित्थं निर्दिदेश—

शतैश्चतुर्भिरधिकमयुतं गणितं मया । द्वे च यान्यतिरिच्येते द्विपदाश्चात्र संगताः ॥२१॥
पृथग् यदा तु गणनं द्विपदानां तदाधिकाः। चतुःशतादशीतिश्च वाक्यं च ग्रहवानयम् ॥२२॥

अर्थाद् ऋग्वेदे १०४०२ द्व्यधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रमृचः सन्ति । यदा तु द्विपदाः पृथग्गण्यन्ते तदा १०८४० अशीत्यधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रमृचो भवन्ति ।

अत्र द्विपदापक्ष ऋचः परिगणयन् बभ्राम माधवः। तथा हि—द्व्यधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रासु (१०४०२) ऋक्षु केवलं चत्वारिंशदुत्तरशतं नैमित्तिका द्विपदा ऋच एव चतुष्पदीकृत्य सप्ततिः परिगणिताः, अतो द्विपदापक्षे शिष्टा सप्ततिसंख्यैव परिवर्धनीया। वेङ्कटमाधवेन त्वष्टसप्ततिसंख्या वर्धिता । अतो मन्यामहे तेन द्व्यधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रासु (१०४०२) नित्यनैमित्तिकानां १५७ द्विपदानामेकां विहाय षट्पञ्चाशदधिकशतर्चां चतुष्पदीकृता अष्टसप्ततिसंख्या परिगणितेति

वेङ्कटमाधव की ऋक्संख्या

वेङ्कटमाधव ने ऋग्वेद के दो भाष्य लिखे हैं। एक लघु और दूसरा बृहत्[2]। वेङ्कटमाधव का काल विक्रम की १२वीं शताब्दी के लगभग माना जाता है। वेङ्कट ने ऋग्वेद के लघु भाष्य के ५वें अष्टक के ५वें अध्याय के उपोद्घात में ऋग्वेद की ऋक्संख्या का उल्लेख इस प्रकार किया है—'शतैश्चतुर्भिः०—

अर्थात्—मैंने ऋग्वेद में १०४०२ ऋचाएं गिनी हैं। इनमें द्विपदाएं सम्मिलित हैं। जब द्विपदाएं पृथक् गिनी जाती हैं तब १०४८० ऋचाएं होती हैं।

वेङ्कटमाधव ने १४० नैमित्तिक द्विपदाओं को ७० चतुष्पदा मानकर जो १०४०२ ऋक्संख्या लिखी है, वह ठीक है, परन्तु द्विपदाओं को पृथक् गिनकर जो १०४८० ऋक्संख्या लिखी है, वह ठीक नहीं, क्योंकि जब द्विपदाएं पृथक् गिनी जायेंगी तब नैमित्तिक द्विपदाओं की केवल ७० संख्या

---

१. वेङ्कटमाधवेनर्ग्वेदस्य द्वे भाष्ये विरचिते । प्रथमं लघु, अपरं बृहत् । लघुभाष्यस्य डाक्टरलक्ष्मणस्वरूपेण सम्पादितस्य त्रयो भागाः प्रकाशिताः । बृहद्भाष्यस्याडियारनगराद् द्वयोः खण्डयोः प्रथमाष्टकं प्रकाशितम् । इदं बृहद्भाष्यमतिपाण्डित्यपूर्णम् । लघुभाष्यस्य प्रत्यध्यायमादौ ये विषयाः संक्षेपत उपन्यस्तास्तेऽस्मिन् भाष्ये विस्तरशो व्यवहृताः । अस्य बृहद्भाष्यस्यैक एव त्रुटिबहुलो हस्तलेख उपलब्धः । बृहद्भाष्यस्य रचयिता अपरो माधव इति तत्संपादकः प्रतिजानीते, परं तन्मिथ्या । निघण्टुटीकाकारेण वेङ्कटमाधवनाम्नोद्धृतानां पाठानामत्र दर्शनात्, लघुभाष्यस्योद्धरणे 'प्रथमभाष्यम्' इति विशेषणस्य निदर्शनाच्च (द्र०—निघण्टुटीका १।१४।१८) । अत्र विस्तरशो विचारः श्रीपण्डितभगवद्दत्तविरचिते 'वैदिक वाङ्मय का इतिहास' ग्रन्थस्य प्रथमभागस्य द्वितीयखण्डे (पृ० ३५-३७) द्रष्टव्यः ।

२. देखो श्री पं० भगवद्दत्तजी कृत वैदिक वाङ्मय का इतिहास भाग १, खण्ड २, पृ० ३६ ।

मतं स्यात्। सप्तपञ्चाशदुत्तरशतसु द्विपदासु सप्तदश नित्या द्विपदास्ता ह्युभयथाऽपि परिगणने न भिद्यन्ते, अवशिष्टाश्चत्वारिंशदुत्तरशतं द्विपदा एव द्विपदापक्षे चतुष्पदापक्षे च संख्याभेदं जनयन्ति। अतो द्विपदापक्षे सप्ततिसंख्यैव परिवर्धनीया, नाष्टसप्ततिरिति दिक्।

एतदनन्तरमृग्वेदस्य वर्गसंख्यां निदर्शयन्नेवमृक्संख्यामाह—

एकर्च एको वर्गः स्याद् द्वृचौ द्वौ नवकावुभौ। एकोनं स्यात् त्रिकशतं चतुष्कं पञ्चसप्ततिः ॥२३॥
अधिकं च शतं वर्गाश्चतुःपञ्चाशदष्टकाः। एकविंशशतं प्राहुः सप्तकानां च वैदिकाः ॥२४॥
शतानि त्रीणि षट्कानां चत्वारिंशत् त्रयस्तथा। पञ्चकानां सहस्रं च द्वे शते नवकं तथा ॥२५॥

एषा वर्गसंख्या तदनुसारिणी चर्क्संख्येत्थमवगन्तव्या—

प्रतिवर्गमृक्संख्या		वर्गसंख्या		ऋक्संख्या
१	×	१	=	१
२	×	२	=	४
३	×	९९	=	२९७
४	×	१७५	=	७००
५	×	१२०९	=	६०४५
६	×	३४३	=	२०५८
७	×	१२१	=	८४७
८	×	५४	=	४३२
९	×	२	=	१८
योगः		२००६		१०४०२

बढ़ेगी, जो कि पहली गणना में चतुष्पदा बना कर गिनी हुई है। अतः १४० द्विपदाओं की आधी संख्या ७० ही बढ़ानी चाहिए। इसलिए वेङ्कटमाधव का ७८ संख्या बढ़ाकर १०४८० संख्या लिखना भूल है।

वेङ्कट माधव की भूल का कारण

हम ऊपर कह आए हैं कि ऋग्वेद में १४० नैमित्तिक और १७ नित्य द्विपदाएं हैं, अर्थात् समस्त द्विपदाएं १५७ हैं। गणना-भेद से केवल नैमित्तिक द्विपदाजन्य संख्या बढ़ेगी, नित्य द्विपदाओं की संख्या तो दोनों गणनाओं में समान रहेगी। प्रतीत होता है कि वेङ्कटमाधव ने १०४०२ ऋक्-संख्या में भूल से समस्त (नित्यनैमित्तिक) १५७ द्विपदाओं में से १५६ समसंख्याक ऋचाओं की (१५६÷२=) ७८ चतुष्पदा ऋचाएं सम्मिलित समझ लीं। अतएव जब उसने द्विपदाओं को पृथक् गिना, तब पूर्वोक्त १४०÷२=७० के स्थान में ७८ संख्या को द्विगुणित कर दिया। यह वेङ्कटमाधव की महती भूल है।

इसके आगे २३, २४, २५ श्लोकों में वेङ्कटमाधव वर्गानुसार ऋक्संख्या का उल्लेख करता है, जो इस प्रकार है—(ऊपर गणना देखें)

एवमृग्वेदे षडधिकद्विसहस्रं वर्गाः, द्वयधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रमृचश्च परिसंख्याताः ।

तदनन्तरमनुवाकानुक्रमण्युक्तर्ग्गणनां दूषयन्नाह—

ऋचां दशसहस्राणि ऋचां पञ्चशतानि च । ऋचामशीतिः पादश्च पाठोऽयं न समञ्जसः ॥

एतेन प्रतीयते माधवोऽनुवाकानुक्रमण्युक्तपरिगणनाप्रकारं नावबुबुधे, अन्यथा तद्गणनां नादूदुषत् ।

महीदासीया ऋग्गणना

महीदासेन स्वीये चरणव्यूहव्याख्याने ऋक्संख्या विस्तरशो न्यरूपि । तत्र तेन द्विपदापक्षे बालखिल्यसहिता १०५५२ द्वापञ्चाशदधिकपञ्चशतोत्तरदशसहस्रमृचः, बालखिल्यैर्विना १०४७२ द्वासप्तत्यधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रमृचः, द्विपदापक्षाभावे च बालखिल्यरहिता १०४०२ द्वयधिक-चतुःशतोत्तरदशसहस्रमृचः परिगणिता इत्युक्तं पुरस्तात् । एतस्मिन्नेव प्रकरणे (पृ० २४, २५) प्रति वर्गर्क्संख्यानुसारेण वर्गसंख्याप्रतिपादकान् कांश्चिच्छ्लोकानुदाजहार । तथा हि—

एकर्च एकवर्गश्च एकर्चं नवकस्तथा । द्वौ वर्गौ तु द्वृचौ ज्ञेयौ ऋक्त्रयस्य शतं स्मृतम् ॥
चतुर्ऋचां पञ्च सप्तत्यधिकं च शतं तथा । पञ्चर्चं तु द्विशतकं सहस्रं रुद्रसंयुतम् ॥

तदनुसार ऋग्वेद में २००६ वर्ग और १०४०२ ऋचाएं होती हैं । वर्गसंख्या तो शौनकीय अनुवाकानुक्रमणी से मिलती है, परन्तु मन्त्रसंख्यानुसार निर्दिष्ट वर्गसंख्या में पर्याप्त भेद है । हां; वेङ्कटमाधव की दोनों (प्रतिवर्गगणना और समस्त गणना की) ऋक्संख्याएं परस्पर अवश्य मिलती हैं ।

वह आगे लिखता है—**'ऋचां दश'०**—

अर्थात्—अनुवाकानुक्रमणी आदि में ऋग्वेद की जो १०५८० और १ पाद ऋग्गणना लिखी है, वह ठीक नहीं है ।

वेङ्कटमाधव ने केवल स्वसंख्यात ऋक्संख्या के आधार पर अनुवाकानुक्रमणी आदि निर्दिष्ट '१०५८० और १ पाद' ऋक्संख्या को अशुद्ध बताया है । प्रतीत होता है, उसने उसके 'पारणम' पद पर किञ्चिन्मात्र ध्यान नहीं दिया, अन्यथा वह इस संख्या को अशुद्ध कहने का साहस न करता ।

महीदास की ऋक्संख्या

चरणव्यूह के टीकाकार महीदास ने ऋग्वेद की ऋग्गणना के विषय में कुछ विस्तार से लिखा है । यद्यपि इस ग्रन्थ के अत्यधिक अशुद्ध मुद्रित होने के कारण अनेक स्थानों में उसका वास्तविक अभिप्राय पूर्णतया समझ में नहीं आता, तथापि उससे ऋग्वेद की ऋग्गणना-सम्बन्धी अनेक ज्ञातव्य बातें विदित होती हैं ।

महीदास के मत में ऋग्वेद में बालखिल्य-सहित १०५५२ मन्त्र हैं, बालखिल्य के विना १०४७२ । इनमें नित्य और नैमित्तिक दोनों प्रकार की द्विपदाएं सम्मिलित हैं । पृष्ठ २७ ।

पञ्चचत्वार्यधिकं षड्ऋचां तु शतत्रयम् । सप्तऋचां शतं ज्ञेयं विंशतिश्चाधिका स्मृताः ॥
अष्टऋचां तु पञ्चाशत् पञ्चाधिकास्तथैव च । दशाधिकद्विसहस्राः पञ्चशाखासु निश्चिताः ॥
वर्गाः संज्ञानसूक्तस्य चत्वारश्चात्र मीलिताः । एवं पारायणे प्रोक्ता ऋचां संख्या न न्यूनतः ॥

एषु प्रतिपादिता वर्गसंख्या ऋक्संख्या चैवं विस्पष्टमवगन्तव्या—

प्रतिवर्गमृक्संख्या		वर्गसंख्या		समस्तऋक्संख्या
१	X	१	=	१
२	X	२	=	४
३	X	१००	=	३००
४	X	१७५	=	७००
५	X	१२११	=	६०५५
६	X	३४५	=	२०७०
७	X	१२०	=	८४०
८	X	५५	=	४४०
९	X	१	=	९
योगः		२०१०		१०४१९

एवमाहत्य २०१० दशाधिकद्विसहस्रं वर्गाः,१०४१९ एकोनविंशत्यधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रमृचः संपद्यन्ते। एषा **वर्गसंख्या ऋक्संख्या** च शाकलचरणान्तर्गतानां पञ्चानां शाखानाम्, **अत्र संज्ञानसूक्तस्य चत्वारो** वर्गाः **पञ्चदशर्चश्चापि संकलिताः। तदभावे १०४०४ चतुरधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रमृचो भवन्ति।** एषा **छन्दःसंख्यापरिशिष्टप्रतिपादितायाः संख्यायाः** द्व्यधिका । तच्चाधिक्यं **शाखान्तरकृतं द्रष्टव्यम्।**

आस्माकीना वर्गगणना ऋक्संख्या च

ऋक्संख्यागणनाय शौनकवेङ्कटमाधवमहीदासैर्वर्गान्तर्गतर्चोऽनुसृत्य वर्गाः संख्याता ।

आगे (पृष्ठ २४, २५ पर) महीदास ऋग्वेद के वर्गों तथा ऋचाओं की संख्या प्रदर्शक कुछ श्लोक उद्धृत करता है, जो इस प्रकार हैं—**'एकर्च०'**

इन श्लोकों के अनुसार वर्गों और ऋचाओं की संख्या इस प्रकार है—(ऊपर गणना देखें)

यह वर्गसंख्या शाकलचरण की पांच शाखाओं की है। इसमें संज्ञान सूक्त के ४ वर्ग सम्मिलित हैं। इसी प्रकार १०४१९ मन्त्रसंख्या में संज्ञान सूक्त की १५ ऋचाओं का भी समावेश है। उन्हें न्यून करने पर १०४०४ ऋक्संख्या उपलब्ध होती है, जो पूर्वोक्त छन्दःसंख्या परिशिष्ट की संख्या से २ संख्या अधिक है। यह अधिकता शाखान्तरकृत प्रतीत होती है।

हमारी वर्गों और ऋचाओं की गणना

शौनक, वेङ्कटमाधव और महीदास ने वर्गान्तर्गत ऋक्संख्यानुसार जो वर्ग-संख्या लिखी है,

तत्रैतेषां वर्गपरिसंख्याने महान् भेदो वर्तते। एषु कस्य समञ्जसा वर्गसंख्येति परिज्ञानायास्माभिरपि सूक्ष्मेक्षिकया वर्गाः संख्याताः। आस्माकीना वर्गगणना एभ्यो नितरां विसंवदतीति स्वीयवर्गगणना-परिशुद्धयै (१) द्विपदापक्षे, (२) नैमित्तिकद्विपदाश्चतुष्पदीकृत्य, (३) बालखिल्यानां दश वर्गान्न्यूनी-कृत्य त्रिधा पुनर्वर्गाः परिगणिताः। एवं त्रिधा परिगणनेऽपि नैवास्माभिः स्वीयगणनायां कश्चिद्दोष उपलब्धः। सा चेत्थं त्रिधा वर्गगणना—

(१) नैमित्तिका द्विपदा द्विपदारूपेण परिगणय्य प्रत्यष्टकं बालखिल्यसहिता वर्गसंख्या एवं वेदितव्या—

अष्टकं	एकर्चः	द्वृचः	तृचः	चतु०	पञ्च०	षड्०	सप्त०	अष्ट०	नव०	दश०	एका०	द्वाद०	योगः
१	१	...	१२	२२	१७३	४२	५	४	...	५	१	...	२६५
२	...	...	१७	१५	१२४	४६	१२	७	...	...	...	...	२२१
३	...	...	४	१६	१३५	४१	२०	९	...	...	...	...	२२५
४	...	...	१२	२६	१५८	२९	१५	१०	...	...	...	...	२५०
५	...	...	१३	१७	१३८	४०	२०	७	...	३	...	...	२३८
६	...	...	११	२८	२०७	५८	१६	१०	...	१	...	...	३३१
७	...	...	८	३६	१५६	३३	१०	२	१	१	...	१	२४८
८	...	...	२३	२१	१२०	५२	२४	६		...	...	...	२४६
योगः	१	...	१००	१८१	१२११	३४१	१२२	५५	१	१०	१	१	२०२४
बालखिल्य-वर्गाः	...	...	२	६	१०	...	...	...	...	...	...	...	१८
बालखिल्य-रहितवर्गाः	१	...	९८	१७५	१२०१	३४१	१२२	५५	१	१०	१	१	२००६

उसमें परस्पर पर्याप्त विभिन्नता है, यह तीनों की वर्गानुसार ऋग्गणना की दी हुई सारणियों की तुलना से व्यक्त है। इन तीनों में से किसकी गणना ठीक है, इसके ज्ञान के लिए हमने भी ऋग्वेद की वर्गान्तर्गत ऋक्संख्या के क्रम से वर्गसंख्या की गणना की। गणना करने पर ज्ञात हुआ कि हमारी गणना पूर्वोक्त तीनों गणनाओं से भिन्न है। अतः हमने अपनी गणना की अनेक प्रकार से परीक्षा की, किन्तु हमें उसमें कहीं भूल उपलब्ध नहीं हुई। हमने वर्गगणना तीन प्रकार से की है। एक—द्विपदापक्ष में, दूसरी नैमित्तिक द्विपदाओं को चतुष्पदा बनाकर, तीसरी—नैमित्तिक द्विपदाओं को चतुष्पदा बनाकर बालखिल्य के ८० मन्त्रों के १८ वर्ग न्यून करके।

(१) नैमित्तिक द्विपदाओं को द्विपदारूप में गिनकर ऋग्वेद की बालखिल्य-सहित समस्त वर्गसंख्या इस प्रकार है—(ऊपर गणना देखें)।

वर्गान्तर्गतर्क्संख्यानुसारं समस्तस्यर्ग्वेदस्य वर्गसंख्या ऋक्संख्या चेत्थं ज्ञेया—

प्रतिवर्गर्क्संख्या		वर्गसंख्या		समस्तर्क्संख्या
१	×	१	=	१
२	...	...	=	...
३	×	१००	=	३००
४	×	१८१	=	७२४
५	×	१२११	=	६०५५
६	×	३४१	=	२०४६
७	×	१२२	=	८५४
८	×	५५	=	४४०
९	×	१	=	९
१०	×	१०	=	१००
११	×	१	=	११
१२	×	१	=	१२
योगः		२०२४		१०५५२

(२) चत्वारिंशदुत्तरशतं नैमित्तिकद्विपदाश्चतुष्पदीकृत्यैवं वर्गसंख्या ऋक्संख्या च वेद्या—

प्रतिवर्गमृक्संख्या		वर्गसंख्या		समस्तर्क्संख्या
१	×	१	=	१
२	×	२	=	४
३	×	१०१	=	३०३
४	×	१८०	=	७२०
५	×	१२२०	=	६१००
६	×	३४३	=	२०५८
७	×	१२१	=	८४७
८	×	५५	=	४४०
९	×	१	=	९
योगः		२०२४		१०४८२

वर्गान्तर्गत ऋक्संख्यानुसार समस्त ऋग्वेद की वर्गसंख्या तथा तदाश्रित ऋक्संख्या इस प्रकार है—(ऊपर देखें)।

(२) ऋग्वेद में आई हुई १४० नैमित्तिक द्विपदाओं को चतुष्पदा बनाकर वर्गसंख्या और तदाश्रित ऋक्संख्या इस प्रकार है—(ऊपर देखें)।

अस्मिन् परिगणने वर्गसंख्या तु सैव २०२४ चतुर्विंशत्युत्तरद्विसहस्रम्, परं मन्त्रसंख्यायां नैमित्तिकद्विपदानां चतुष्पदीभावे सप्ततिसंख्याया न्यूनता जायते।

(३) यदा तु चतुष्पदापक्षे बालखिल्यानामृचामष्टादश वर्गा अशीतिर्ऋचश्च परिहीयन्ते तदेयं वर्गसंख्या ऋक्संख्या च बोध्या—

प्रतिवर्गमृक्संख्या		वर्गसंख्या		समस्तर्क्संख्या
१	X	१	=	१
२	X	२	=	४
३	X	९९	=	२९७
४	X	१७४	=	६९६
५	X	१२१०	=	६०५०
६	X	३४३	=	२०५८
७	X	१२१	=	८४७
८	X	५५	=	४४०
९	X	१	=	९
योगः		२००६		१०४०२

सम्प्रति शौनक-माधव-महीदासानामस्माकं च बालखिल्यरहितानां वर्गाणां संख्यापरिगणने यो भेदस्तद्विवृत्त्यै सर्वेषामपि वर्गान्तर्गतर्क्संख्यानुसारं वर्गाः परिसंख्यायन्ते—

प्रतिवर्गर्क्संख्या	शौनकीया	वेङ्कटमाधवीया	आस्माकीना	महीदासीया
१	१	१	१	१
२	२	२	२	२
३	९७	९९	९९	१००
४	१७४	१७५	१७४	१७५
५	१२०७	१२०९	१२१०	१२११
६	३४६	३४३	३४३	३४५
७	११९	१२१	१२१	१२०
८	५९	५४	५५	५५
९	१	२	१	१
योगः	२००६	२००६	२००६	२०१०

इस गणना में नैमित्तिक द्विपदाओं की दो-दो ऋचाओं को एक चतुष्पदा मानकर गिना है। अतः इस गणना में वर्गसंख्या तो वही २०२४ है, परन्तु ऋक्संख्या में ७० संख्या न्यून हो गई है।

(३) यदि नैमित्तिक द्विपदाओं को चतुष्पदा गिन कर दर्शाई हुई उपर्युक्त वर्गसंख्या में से

इदमत्रावधेयम्—शौनकादीनां वर्गसंख्याने बालखिल्या ऋचो न संख्यायन्ते, न च नैमित्तिका द्विपदा द्विपदारूपेण । अतोऽस्माभिस्तत्पक्षीया एव स्वीया वर्गसंख्याऽत्र निर्दिष्टा । सर्वश्चैष वर्गसंख्या-भेदोऽवान्तरशाखाभेदकृत एवेत्यनुमिनुमः । महीदासीया वर्गसंख्या तु शाकलचरणान्तर्गतानां पञ्चानां शाखानामिति स एव विस्पष्टं जगाद ।

प्रकृतभाष्यकृता परिसंख्याता ऋक्संख्या

प्रकृतभाष्यकृता स्वीयर्ग्वेदभाष्यस्योपोद्घाते (पृष्ठ ४३२--४३७) ऋग्वेदान्तर्गतानामृचां परिगणनमकारि । तत्र प्रतिमण्डलं या ऋक्संख्याः परिसंख्यातास्तासामयं योगः—

१९७६+४२९+६१७+५८९+७२७+७६५+८४१+१७२६+१०९७+१७४५= १०५२१ ।

अत्र प्रतिमण्डलर्क्संख्यायां लेखकप्रमादाद् द्वे अशुद्धी बभूवतुः । तत्रैका—अष्टममण्डला-न्तर्गतचतुर्विंशतितमसूक्तमन्त्राणां षड्विंशतिसंख्यास्थाने षट्त्रिंशत् संख्या लिखिता । तेन तन्मण्डली-

---

बालखिल्यान्तर्गत १८ वर्ग और उनकी ८० ऋचाएं न्यून कर दें तो वर्गसंख्या निम्नलिखित होगी— (ऊपर देखें पृष्ठ ७१९) ।

अब हम क्रमशः शौनक, वेङ्कटमाधव, अपनी और महीदास की वर्गगणना नीचे लिखते हैं। इससे प्रत्येक की वर्गगणना में जो भेद है, वह व्यक्त हो जाएगा—(ऊपर देखें पृष्ठ ७१९) ।

शौनक और वेङ्कटमाधव ने जो वर्गगणना लिखी है, उसमें १४० नैमित्तिक द्विपदाओं को ७० चतुष्पदा बनाकर गणना की है, और उसमें बालखिल्य ऋचाओं की गणना नहीं है । अतः हमने तुलना के लिए अपनी वर्गगणना भी इसी प्रकार लिखी है। यह भी ध्यान रहे कि महीदास की वर्गगणना शाकलचरण की पांच संहिताओं की है। यह हम उसी के शब्दों में पूर्व लिख चुके हैं, परन्तु उसकी गणना में भी बालखिल्य ऋचाओं का समावेश नहीं है ।

हमारा विचार है कि चारों की वर्गसंख्याओं में जो विभिन्नता है, उसका कारण शाखाभेद है ।

प्रकृत भाष्यकार कृत ऋग्गणना

प्रकृत भाष्यकार भगवत्पाद दयानन्द सरस्वती ने अपने ऋग्वेदभाष्य की अनुभूमिका पृष्ठ ४३२-४३७ में ऋग्वेद की ऋक्संख्या का उल्लेख किया है। उन्होंने प्रतिमण्डल जो ऋक्संख्याएं लिखी हैं, उनका योग क्रमशः इस प्रकार है—

१९७६+४२९+६१७+५८९+७२७+७६५+८४१+१७२६+१०९७+१७५४= १०५२१ ।

इस प्रतिमण्डल ऋक्संख्या में लेखक के प्रमाद से दो अशुद्धियां हुई हैं। **प्रथम**—ऋग्वेद के आठवें मण्डल के २४वें सूक्त की मन्त्रसंख्या २६ के स्थान में ३६ लिखी है, अतएव उसका योग भी १७१६ के स्थान में १७२६ हो गया है अर्थात् यहां १० संख्या अधिक गिनी गई है। वस्तुतः

यग् योगोऽपि १७१६ षोडशाधिकसप्तशतोत्तरैकसहस्रस्थाने १७२६ षड्विंशत्यधिकसप्तशतोत्तरैक-सहस्रं संजातः । द्वितीया—नवममण्डलस्य प्रतिसूक्तनिर्दिष्टसंख्यायोगकाले दृष्टिदोषात् काचिद् एकादश संख्या परित्यक्ता । तेन तद्योगोऽपि ११०८ अष्टाधिकशतोत्तरैकसहस्रस्थाने १०९७ सप्त-नवत्यधिकैकसहस्रं बभूव । इमौ दोषौ परिमृज्य सकलर्क्संख्या १०५२२ द्वाविंशत्यधिकपञ्चशतोत्तर-दशसहस्रं संपद्यते ।

अयमृचां योगो मैक्समूलरीयर्क्संस्करणानुसारं विद्यते । तदीयर्क्संस्करणे च ये दोषास्ते पुरस्तात् प्रतिपादिताः। अतोऽत्रापि प्रथममण्डलान्तर्गताः षष्टिर्नैमित्तिका द्विपदाश्चतुष्पदीकृत्य त्रिंशत् परिगणिताः । एतद्दोषपरिमार्जने कृते सैव १०५५२ द्विपञ्चाशदधिकपञ्चशतोत्तरदशसहस्र-मृक्संख्या संपद्यते ।

प्रतिमण्डलमृक्संख्यामुक्त्वा सर्वर्क्परिगणनां कुर्वन् स्वामिदयानन्दसरस्वत्याह—'दशसहस्राणि पञ्चशतानि एकोननवतिश्च १०५८९ मन्त्रा सन्तीति वेद्यम् ।' (द्र०—पृ० ४३७ इदं संस्करणम्) ।

एषा संख्या प्राङ्निर्दिष्टर्क्संख्यातो नितरां भिद्यते । न च तद्भेदे किञ्चित् कारणमुक्तम् । अतो मन्यामहे, अत्रापि लेखकप्रमाद एव कारणं स्यात् । स चेत्थम्—प्रतिमण्डलमुक्तानामृक्संख्यानां कृत्स्नं योगं कुर्वता लेखकेनैकविंशत्यधिकपञ्चशतोत्तरदशसहस्रसंख्या अङ्कैः १०५२१ निर्दिष्टा । तदनु स्वामिभिस्तस्मिन्नस्पष्टाङ्कैर्लिखिते योगे एकाङ्को नवाङ्कत्वेन, द्व्यङ्कोऽष्टाङ्कत्वेन (१०५८९) चावबुद्ध्याक्षरेषु—दशसहस्राणि पञ्चशतानि एकोननवतिश्च मन्त्राः' इत्येवं सर्व ऋग्योगोऽलेखि । नागर्यां लिप्यामेतयोरङ्कयोरस्पष्टलेखने प्रायेणैतादृशो भ्रमो जायते । तेन—'दशसहस्राणि पञ्चशतानि एकोननवतिश्च मन्त्राः' इति लेखो लेखकपाठकभ्रममूलक एव ।

इस मण्डल की ऋक्संख्या १७१६ होनी चाहिये । द्वितीय—नवम मण्डल की प्रतिसूक्त लिखित संख्या के योग में ११ संख्या न्यून है । प्रतीत होता है कि योग करते समय किसी सूक्त की ११ ऋचाएं गिनने से रह गईं । अतः इस मण्डल की ऋचाओं का योग १०९७ के स्थान में ११०८ होना चाहिए । इस प्रकार यदि अष्टम और नवम मण्डल के योग को शुद्ध कर लिया जाए, तो उनका पूर्ण योग १०५२२ होगा ।

यह योग मैक्समूलर के ऋक्संस्करण के अनुसार है । हम पूर्व लिख चुके हैं कि मैक्समूलर के ऋक्संस्करण में प्रथम मण्डल की ६० नैमित्तिक द्विपदाएं ३० चतुष्पदा बनाकर छापी गई हैं (शेष ८० द्विपदारूप में ही छापी हैं) । अतः १०५५२ संख्या में प्रथम मण्डलस्थ द्विपदाओं की शेष ३० संख्या और सम्मिलित कर ली जाए, तो सर्वयोग १०५२२ होगा । इसमें नित्य नैमित्तिक द्विपदा तथा बालखिल्य ऋचाएं सम्मिलित हैं । यह संख्या ऋक्सर्वानुक्रमणी, उसके टीकाकार जगन्नाथ चरणव्यूहटीकाकार महिदास, और छन्दःसंख्या-परिशिष्ट की दी हुई ऋक्संख्या से पूर्णतया मिल जाती है ।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने प्रतिमण्डल ऋक्संख्या का पृथक्-पृथक् उल्लेख करके अन्त में समस्त ऋचाओं का योग अक्षरों और अङ्कों दोनों में १०५८९ लिखा है (पृष्ठ ४३७) । इस अशुद्धि का कारण भी लेखक-प्रमाद ही है । प्रतीत होता है प्रतिलिपि करते समय लेखक ने अस्पष्ट

पण्डितभगवद्दत्तमहोदयः स्वीये वैदिकवाङ्मयेतिह्ये स्वामिदयानन्दनिर्दिष्टविभिन्नक्संख्या-समन्वयं प्रतिपादयन्नाह—

'यदि स्वामिदयानन्दस्य १०५२१ ऋग्गणनायां नैमित्तिकद्विपदानामर्धासु सप्ततिसंख्यासु पञ्चममण्डलस्य चतुर्विंशसूक्तस्य द्विगुणत्वेन परिगणितां द्विसंख्यां परिहायाष्टषष्टिसंख्याया योगः क्रियेत, तर्हि १०५८९ संख्योपपद्यते' (भा० १, पृ० १३७]।

वस्तुतः पण्डितभगवद्दत्तमहोदयेनापि नैतदवगतं यन्मैक्समूलरीयऋक्संस्करणे कति ऋचो द्विपदारूपेण मुद्रिताः कति च चतुष्पदारूपेण। यदि ह्यस्य ज्ञानमभविष्यत्तर्हि न स एवमवक्ष्यत्। यतो हि मैक्समूलरीये संस्करणे षट्सप्ततिर्द्विपदा द्विपदारूपेणैव मुद्रिताः। अतो नैव तासां पुनर्द्विगुणीभावो युज्यते।

एवं चैतद् भाष्यकृतोक्तयोः १०५२१ तथा १०५८९ संख्ययोः सामञ्जस्यं नोपपद्यते। वस्तुत उभयोरपि योगयोर्लेखकगणकप्रमाद एव कारणम्।

अङ्कों में लिखे गये १०५२१ योग में २ को ८ और १ को ९ पढ़ लिया होगा, और पूर्ण योग १०५८९ लिख दिया होगा। शीघ्रता में लिखी गई संख्याओं के पढ़ने में प्रायः ऐसी भूल हो जाती हैं।

श्री पं० भगवद्दत्त जी ने 'वैदिक वाङ्मय का इतिहास' के प्रथम भाग पृष्ठ १३७ पर स्वामी दयानन्द सरस्वती की १०५२१ और १०५८९ दोनों संख्याओं में सामञ्जस्य दर्शाने का प्रयत्न किया है। उनका लेख इस प्रकार है—

स्वामी दयानन्द सरस्वती की १०५२१ गणना में यदि नैमित्तिक द्विपदा ऋचाओं का आधा अर्थात् १४०÷२=७०, और इनमें से ऋ० ५।२४ को २ कम करके (जो पहले ही द्विगुणित हैं) ६८ जोड़ी जाएं, तो कुल संख्या १०५८९ हो जाती है।

पण्डितजी ने उक्त समाधान करते समय इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि १०५२१ (१०५२२)संख्या में कितनी द्विपदाएं द्विपदारूप में गिनीगई हैं, और कितनी द्विपदाएं चतुष्पदाएं बनाकर आधी गिनी गई हैं। उन्होंने भी मैक्समूलर सम्पादित ऋक्संस्करण या तदाश्रित अन्य संस्करण को ही प्रमाण मानकर सामञ्जस्य दर्शाने का प्रयत्न किया है। वस्तुतः जिस प्रकार उन्होंने ऋ० ५।२४ के दो मन्त्रों को, जिन्हें प्रथम ही द्विपदा मानकर ४ ऋचाएं गिना गया है, पुनः द्विगुणित करने में छोड़ दिया। इसी प्रकार प्रथम और पञ्चम मण्डलातिरिक्त ७६ नैमित्तिक द्विपदा ऋचाओं को (जिन्हें मैक्समूलर के ऋक्संस्करण में द्विपदारूप में ही छापा है) भी पुनः द्विगुणित नहीं करना चाहिए था। केवल प्रथम मण्डल की द्विपदाएं, जो ३० चतुष्पदा बनाकर छापी गई हैं, पुनः द्विगुणित करनी चाहिएं थीं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि स्वामी दयानन्द सरस्वती की १०५२१ और १०५८९ संख्या में कोई सामञ्जस्य नहीं बनता। वस्तुतः दोनों विभिन्न संख्याओं का कारण लेखक-प्रमाद ही है, जैसा हम ऊपर दर्शा चुके हैं। इसलिए स्वामी दयानन्द सरस्वती का सर्वयोग भी १०५२२ होना चाहिए।

अध्यापकमैकडानलस्य ऋग्गणना

अध्यापकमैकडानलेन स्वसम्पादिताया ऋक्सर्वानुक्रमण्या उपोद्घाते ऋग्वेदस्य ऋग्गणनामधिकृत्य विस्तरेण लिखितम् । तत्र तस्य बह्व्यो भ्रान्तयः संजाताः । तद्यथा—

प्रथमा—मैकडानलस्य प्रतिछन्दोऽनुसारं परिगणितानामृचां सर्वयोगः १०४४२ द्विचत्वारिंशदधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रं भवति । तत्र द्विपदां योगः १२७ सप्तविंशत्युत्तरैकशतम्, प्रथममण्डले चैकत्रिंशद् द्विपदाः परिगणिताः । ऋक्सर्वानुक्रमण्यनुसारं प्रथममण्डले पञ्चषष्टितमसूक्तादासप्ततितमसूक्तमेकषष्टिर्द्विपदाः सन्ति । मैक्समूलरेणाऽऽद्यमण्डलस्थाः षष्टिर्द्विपदाश्चतुष्पदीकृत्य त्रिंशन्मन्त्रा मुद्रिता इत्युक्तं पुरस्तात । मन्यामहे मैकडानलो मैक्समूलरीये ऋग्वेदे चतुष्पदीकृतास्त्रिंशदृचो भ्रान्त्या द्विपदा मत्वा त्रिंशदेव द्विपदासु परिगणितवान्, (एका तत्र नित्यद्विपदा रूपा) । सर्वानुक्रमण्याश्च सम्पादनं विदधन् सर्वानुक्रमण्यां मैक्समूलरीयवर्संस्करणे चाद्यमण्डलान्तर्गतानां पञ्चषष्टितमादासप्ततितमं षण्णां सूक्तानां परस्परमृक्संख्याभेदं दृष्ट्वाऽपि मैक्समूलरीयं दोषं नावगतवान् ।

प्रो० मैकडानल की ऋग्गणना

प्रोफेसर मैकडानल ने स्वसम्पादित ऋक्सर्वानुक्रमणी की भूमिका पृष्ठ १७, १८ पर ऋग्वेद की ऋक्संख्या के विषय में कुछ विस्तार से लिखा है। उस लेख में प्रो० मैकडानल ने ऋग्वेद की ऋग्गणना के विषय में सबसे अधिक भूलें की हैं।

पहली भूल—मैकडानल ने प्रतिछन्द ऋक्संख्या का निर्देश करके सर्वयोग १०४४२ लिखा है। इस प्रतिछन्द संख्या में द्विपदा ऋचाओं का योग १२७ है। प्रथम मण्डल में ३१ द्विपदाएं लिखी हैं। कात्यायनकृत सर्वानुक्रमणी के अनुसार प्रथम मण्डल के ६५-७० सूक्त तक ६१ द्विपदा ऋचाएं हैं। इन ६१ द्विपदाओं में ७०वें सूक्त की ११वीं ऋचा नित्य द्विपदा है, शेष ६० नैमित्तिक हैं। मैकडानल ने मैक्समूलर के ऋक्संस्करण के अनुसार ६१ ऋचाओं को ३१ गिन लिया। मैक्समूलर ने ६० द्विपदाओं को ३० चतुष्पदा बनाकर छापा है, यह हम पूर्व लिख चुके हैं। अतः मैकडानल की लिखी हुई ३१ द्विपदाओं में ३० चतुष्पदाएं हैं और १ द्विपदा। आश्चर्य की बात तो यह है कि मैकडानल ने ऋक्सर्वानुक्रमणी का सम्पादन करते हुए प्रथम मण्डल के ६५-७० सूक्त तक ऋक्सर्वानुक्रमणी और मैक्समूलर-मुद्रित ऋग्वेद में प्रतिसूक्त ऋक्संख्या में भेद देखकर भी मैक्समूलर की द्विपदा-ऋचाओं की मुद्रण-सम्बन्धी भयानक भूल का परिशोध नहीं किया। इससे भी अधिक आश्चर्य इस बात पर है कि उसने मैक्समूलर के ऋक्संस्करण में चतुष्पदा बना कर छापी गई ऋचाओं को द्विपदा समझकर द्विपदाओं में गणना कर ली। यह है पाश्चात्य विद्वानों का पाण्डित्य! जिन्हें द्विपदा और चतुष्पदा ऋचाओं के भेद का भी ज्ञान नहीं। अतः प्रथम मण्डल के ६५-७० सूक्त की ऋचाओं को द्विपदा मानकर गिना जाय, तो उनकी संख्या ३१ के स्थान में ६१ होगी, और द्विपदाओं का सर्वयोग १२७ न होकर १५७ होगा। अत एव मैकडानल का सर्वयोग भी १०४४२ के स्थान में १०४७२ हो जायगा, जो कि सर्वसम्मत है। इसमें बालखिल्य ऋचाएं सम्मिलित नहीं हैं।

द्वितीया—छन्दःसंख्यापरिशिष्टे सप्तदश द्विपदा निर्दिष्टाः। मैकडानलेन द्विपदानामृचां योगः सप्तविंशत्युत्तरशतमुक्तः (१७ नित्याः+३० प्रथमे मण्डले+८० अन्यमण्डलस्थाः)। अनयोः संख्ययोर् (छन्दःसंख्योक्तायां स्वीयायां च) आद्यन्तयोरङ्कयोः साम्यं (आदावेकाङ्कोऽन्ते सप्ताङ्कः) दृष्ट्वा मैकडानल ऊहितवान्—नूनं छन्दःसंख्यापरिशिष्टे द्विपदायोगे मध्यवर्ती द्व्यङ्को नष्ट इति (अर्थात् १२७ स्थाने कथञ्चित् प्रमादात् १७ संख्या निर्दिष्टा)। महदाश्चर्यम्! यन्मैकडानल इदमपि नावबुबुधे, यच्छन्दःसंख्यापरिशिष्ट उक्ता सप्तदशसंख्या नित्यानां द्विपदानामस्तीति। अतो मन्यामहे—मैकडानलो द्विपदानां नित्यनैमित्तिकभेदमपि नावबुबुध इति।

तृतीया—मैकडानलो निर्दिशति यत्—ऋग्वेदस्य शाकलसंहितायामृचां पूर्णयोगो १०४४२ द्वाचत्वारिंशदधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रं जायते। छन्दःसंख्यापरिशिष्टे तु १०४०२ द्व्यधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रमृच उक्ताः' [ऋक्सर्वा० भूमिका पृ० १७]।

छन्दःसंख्यापरिशिष्टे यद्वृङ्मानमुक्तं तत्र १४० चत्वारिंशदुत्तरमेकशतं द्विपदाश्चतुष्पदीकृताः सप्ततिः परिगणिताः। तासां द्विपदापक्षे १०४७२ सप्तत्यधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रं योगो जायत इत्यवोचाम पुरस्तात्। मैकडानलीये ऋग्योगे प्रथममण्डलस्थद्विपदायोगे त्रिंशत्संख्याया अशुद्धिर्वर्तत इत्यप्यनुपदमुक्तमेव। तस्याः परिशोधने विहिते मैकडानलस्य सर्वयोगोऽपि १०४७२ द्वासप्तत्यधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रमेव भवति। संभाव्यते छन्दःसंख्यापरिशिष्टस्य ऋग्गणनाप्रकारं नावगतवान् मैकडानलः।

चतुर्थी—तदग्रे च मैकडानल आह '१२७ सप्तविंशत्यधिकैकशतद्विपदानां द्विगुणीभावे

दूसरी भूल—मैकडानल लिखता है—'छन्दःसंख्यापरिशिष्ट में १२७ के स्थान में १७ द्विपदाएं गिनी हैं। सम्भव है छन्दःसंख्या की गणना में मध्यवर्ती २ संख्या खण्डित हो गई हो।' मैकडानल की इस कल्पना के विषय में हम पूर्व ही लिख आए हैं। अतः यहां पुनः लिखना पिष्टपेषणवत् होगा। प्रतीत होता है कि मैकडानल को द्विपदाओं के नित्य और नैमित्तिक भेदों का कुछ भी ज्ञान नहीं था। अन्यथा वह छन्दःसंख्यापरिशिष्टोक्त १७ नित्य द्विपदाओं के विषय में इस प्रकार की कल्पना कदापि न करता।

तीसरी भूल—मैकडानल लिखता है—'ऋग्वेद की शाकल संहिता की ऋचाओं का सर्वयोग १०४४२ होता है, जबकि छन्दःसंख्यापरिशिष्ट में १०४०२ है।' ऋक्सर्वा० की भूमिका पृ० १७।

छन्दःसंख्या-परिशिष्ट का १०४०२ योग १४० नैमित्तिक द्विपदाओं को ७० चतुष्पदा गिन कर लिखा गया है, यह हम पूर्व दर्शा चुके हैं। तदनुसार द्विपदापक्ष में यह योग १०४७२ होगा। मैकडानल के योग में प्रथम मण्डलस्थ द्विपदाओं की गणना में जो ३० संख्या की भूल हमने ऊपर दर्शाई है, उसे ठीक करने पर उसका योग भी १०४७२ होगा। अतः छन्दःसंख्या-परिशिष्टोक्त १०४०२ संख्या के गणना-प्रकार को न समझकर उसमें भिन्नता दर्शाना तीसरी भूल है।

चौथी भूल—मैकडानल लिखता है—'१२७ द्विपदाओं को दूसरी बार गिनकर मेरा योग (१०४४२+१२७)=१०५६९ होता है।' ऋक्सर्वा० भूमिका पृष्ठ १८।

मदीयो योगः (१०४४२+१२७=) १०५६९ एकोनषट्यधिकपञ्चशतोत्तरदशसहस्रं संपद्यते' [ऋक्सर्वा० भूमिका० पृ० १८]।

अत्र मैकडानल ऋक्सर्वानुक्रमण्याः—'द्विर्द्विपदास्त्वृचः समामनन्ति' इति सूत्रस्यार्थमवधीर्य द्विपदात्वेन परिगणिता अप्यृचः पुनर्द्विगुणीकृतवान्। वस्तुतोऽध्ययनकाले चतुष्पदीकृता एवर्चो यज्ञकाले (द्विपदापक्षे) द्विगुणीक्रियन्ते, न तु द्विपदा एव।

पञ्चमी—एतद्विषयकस्य पण्डितभगवद्दत्तीयपत्रस्योत्तरं परिददन् मैकडानल आह—'ऋग्वेदस्य पञ्चममण्डलस्य चतुर्विंशतितमस्य सूक्तस्य द्वे द्विपदे सर्वानुक्रमण्यामेव कथं द्विगुणीकृते इति न ज्ञायते...... कथमपि तयोः पुनर्द्विगुणीकरणं नोचितं प्रतिभाति। तथा सति मदीय ऋचां योगः १०५६९ एकोनसप्तत्यधिकपञ्चशतोत्तरदशसहस्रस्थाने १०५६५ पञ्चषष्ट्यधिकपञ्चशतोत्तरदशसहस्रं भविष्यति' [वैदिकवाङ्मयस्येतिहासः, भाग १, पृष्ठ १३६ उद्धृतम्]।

कात्यायन के 'द्विर्द्विपदास्त्वृचः समामनन्ति' इस परिभाषा-सूत्र का षड्गुरु-शिष्य की वृत्ति-सहित शुद्ध अर्थ हम पूर्व लिख चुके हैं। तदनुसार यज्ञकाल में द्विपदारूप में प्रयुक्त होनेवाली (१४०) ऋचाएं दो-दो ऋचाएं मिलकर अध्ययनकाल में एक चतुष्पदा ऋक् बनती है। मैकडानल के उपर्युक्त लेख को देखने से विदित होता है कि उसने कात्यायन के इस सूत्र का वास्तविक अर्थ ही नहीं समझा। अत एव उसने द्विपदारूप से गिनी गई ऋचाओं को पुनः द्विगुणित करके १०४४२ में १२७ संख्या और जोड़ दी, जो सर्वथा अयुक्त है।

पांचवी भूल—पं० भगवद्दत्त जी को ऋग्वेद की ५।२४ के विषय में जो भ्रांति हुई, उसका उल्लेख हम पूर्व कर आए हैं। उन्होंने ऋग्वेद ५।२४ के विषय में १६-७-१९१९ को एक पत्र प्रो० मैकडानल को लिखा था। उसके उत्तर में ८-८-१९१९ को मैकडानल ने लिखा है—

'मुझे यह प्रश्न समझ में नहीं आता कि ऋ० ५।२४ की दो द्विपदा ऋचाओं को सर्वानुक्रमणी में ही क्यों द्विगुणित कर दिया .....किसी दशा में ५।२४ की द्विपदाओं को द्विगुणित करना ठीक प्रतीत नहीं होता। ऐसा करने से मेरी मन्त्रगणना (१०५६७ के स्थान में) १०५६५ हो जाएगी।'' देखो वैदिक वाङ्मय का इतिहास' भाग १, पृष्ठ १३६।

---

1. I am unable to look into the question why the two dvipadas of V. 24 are doubled in the text of the Sarvanukramni (1,2I3,4I) unless it is intended to express that they are treated as sacrificial, and not as recited dvipads (cp commentary on introduction I 12, 10. where I. 65 is quoted). In any case it seems wrong to re-double the two dvipads of V. 24. This would make my total 10,565. The commentrator of the caranavyuha, according to a marginal note I made long ago in my idition of the Sarvanukramni gives the total I0, 552 only I3 less than my total (counting the Valkhilyas); in another place in the same com. I0, 566 is given as the total, counting the I40 naimittikadvipadas, I more than my corrected

अत्र यद् द्विपदयोः पुनर्द्विगुणीकरणमुक्तं, तदपि नैव क्षोदक्षमम्। एतस्या भ्रान्तेर्मूलमपि मैक्समूलरीयमृक्संस्करणमेव। यतो हि तत्र (५।२४) चतस्रो द्विपदाश्चतुष्पदीकृत्य द्वे ऋचे मुद्रिते, मन्त्रसंख्या तु प्रतिमन्त्रं द्विर्द्विर्निर्दिष्टा। सर्वानुक्रमण्यां चतस्र एव द्विपदा उक्ताः। अतः—सर्वानुक्रमण्यामेव द्वे द्विपदे कथं द्विगुणीकृते' इति वचनं भ्रममूलकमेव।

षष्ठी—पुरस्तान्निर्दिष्टे पत्रोद्धरणे मैकडानलः पञ्चमसमण्डलस्य चतुर्विंशतितमसूक्तस्य पुनर्द्विगुणीभावे स्वकीयमृग्योगं संशोधयन् चतुःसंख्या न्यूनीकृत्य १०५६६ स्थाने १०५६५ उक्तवान्। अत्रेदं चिन्त्यम्, यद् द्वयोर्द्विपदयोः पुनर्द्विगुणीभावं संशोधयता द्विसंख्यैव न्यूनीकर्तव्याऽऽसीन्न तु संख्याचतुष्टयम्। तथा सति १०५६९ स्थाने १०५६७ ऋचां योगस्तेन वक्तव्यो न तु १०५६५।

सत्यव्रतसामश्रमिण ऋग्गणना

पण्डितसत्यव्रतसामश्रमिणा 'ऐतरेयालोचने' ऋग्गणनामधिकृत्य बहु प्रपञ्चितम् तत्र च स

इस लेख से स्पष्ट है कि मैकडानल ने भी पं० भगवद्दत्त जी के कथन को स्वीकार कर लिया। सम्भव है उसने भी ऋ० ५।२४ की ऋचाओं को पुस्तक खोलकर नहीं देखा, या उसे द्विपदा और चतुष्पदा के भेद का बोध न रहा हो। सर्वानुक्रमणी में ५।२४ की दो द्विपदाओं को क्यों द्विगुणित कर दिया'। यह लिखना भी अयुक्त है।

छठी भूल—सर्वानुक्रमणी में द्विपदाओं को द्विगुणित नहीं किया, अपितु उन्हें ४ द्विपदा लिखा है, जो उचित है। प्रो० मैकडानल को यह भूल मैक्समूलर के ऋक्संस्करण से हुई है, इसका वर्णन हम विस्तार से पूर्व कर चुके हैं। यहां पर मैकडानल ने एक और भारी भूल की है। उसके कथनानुसार ऋक्सर्वानुक्रमणी में ५।२४ की दो ऋचाओं को द्विगुणित किया है। अतः उसके द्विगुणितत्व को हटाने के लिए दो संख्या न्यून करनी चाहिए थी, परन्तु उसने दो के स्थान में चार संख्या न्यून कर दी।

पं० सत्यव्रत सामश्रमी की ऋग्गणना

पं० सत्यव्रत सामश्रमी ने ऋग्वेद की ऋक्संख्या के विषय में 'ऐतरेयालोचन' के पृष्ठ १४२, १४३ पर कुछ लिखा है। उसमें उन्होंने भी अनेक भूलें की हैं। उनमें सबसे प्रधान भूल छन्दः-

---

total. If the 1 odd pada is here counted as 1 verse, the total would be exactly the same.

The question of the treatment of the 94 verses consisting of 3 ardharcas should be taken into consideration in calculating totals : when sacrificial 3 ardharcas count as one verse, if recited, as two verses.

बहुधा बभ्राम । छन्दःसंख्यापरिशिष्टोक्तकर्तृव्याख्याने या तस्य भ्रान्तिः सा पुरस्तात् प्रदर्शिता । ततोऽन्याऽत्र प्रदर्श्यते—

ऐतरेयालोचने सामश्रमिणोक्तम्—'अस्मत्परिगणनया त्वाश्वलायनसंहितायां १०५२२ ऋचो दृश्यन्ते' इति । तदग्रे च—'तद् बालखिल्यसहिताः १०५२२ ऋचः श्रूयन्त इति त्वस्माभिः सुनिश्चितम्' [ऐतरेया० पृ० १४३] इति ।

उपलभ्यमाना ऋक्संहिता नाश्वलायनी, अपि तु शाकलचरणस्यैव काचिदियं शाखेत्यत्र नास्ति कस्यापि विदुषो वैमत्यम् । आश्वलायनी शाखा तु शाकलचरणाद् बहिर्भूता । तत्संख्या संहितेति नाविदितं वैदिकविदुषाम् । अत एतस्या आश्वलायनीनाम्ना निर्देशो भ्रान्तिमूलक एव । यच्चात्र सामश्रमिणा ऋग्वेदस्य सकलर्ग्योगः १०५२२ उक्तः, सोऽपि मैक्समूलरीयवर्त्तस्करणानुसारी । तत्र प्रथममण्डलस्थाः षष्टिर्नैमित्तिका द्विपदाश्चतुष्पदीकृत्य त्रिंशन्मुद्रिताः, अवशिष्टास्तु द्विपदा एवेत्युक्तं पुरस्तात् । अतोऽत्रापि सामश्रमिणः सुनिश्चिता अपि संख्या दुर्निश्चितैव बभूव । वस्तुतस्तु निपाठे १०५५२ सुनिश्चिता संख्या, तदभावेऽध्ययनकाले १०४८२ सुनिश्चिता संख्या विज्ञेया, यथोक्तं पुरस्तादस्माभिः ।

हरिप्रसादस्य ऋग्गणना

पण्डितहरिप्रसादेन 'वेदसर्वस्व'ग्रन्थे (पृ० ६५—६८) ऋक्संख्याविषये किञ्चिदलेखि । तत्र

संख्या-परिशिष्ट-उल्लिखित ऋग्गणना के विषय में है । इसके विषय में हम पूर्व लिख चुके हैं । अतः उसका यहां पुनः पिष्टपेषण करना उचित नहीं । 'ऐतरेयालोचन' पृष्ठ १४३ पर लिखा है—

'अस्मत्परिगणनया त्वाश्वलायनसंहितायाम् १०५२२ ऋचो दृश्यन्ते ।'

पुनः आगे लिखता है—'तद्बालखिल्यसहिताः १०५२२ ऋचः श्रूयन्त इति त्वस्माभिः सुनिश्चितम् ।'

पं० सत्यव्रत सामश्रमी ने यहां दो भूलें की हैं । एक—ऋग्वेद की वर्त्तमान संहिता को आश्वलायनी लिखा है, वह अयुक्त है । वह वस्तुतः शाकल संहिता है । दूसरी—पण्डित जी ने बालखिल्य-सहित जो १०५२२ सुनिश्चित ऋक्संख्या लिखी है, वह भी अयुक्त है । उनकी गणना का आधार भी मैक्समूलर सम्पादित या तदाश्रित अन्य ऋक्संस्करण है । मैक्समूलर के ऋक्संस्करण में प्रथम मंडल की ६० द्विपदाओं को ३० चतुष्पदा बनाकर छापा है, यह हम पूर्व लिख चुके हैं । अतएव उसके अनुसार ऋग्गणना करने में पं० सत्यव्रत सामश्रमी की सुनिश्चित ऋक्संख्या में भी ३० की न्यूनता रह गई । इसलिये उनकी पूर्णसंख्या भी १०५५२ होनी चाहिए । अध्ययन काल में नैमित्तिक १४० द्विपदाओं को चतुष्पदा मानने पर १०४८२ संख्या जाननी चाहिये ।

पं० हरिप्रसाद की ऋग्गणना

पं० हरिप्रसाद ने अपने 'वेदसर्वस्व' ग्रन्थ में पृष्ठ ६५-६८ तक ऋग्वेद की मन्त्र-संख्या के

तत्र प्रायः सामश्रमिणोऽनुकृतिरेव। तेन सामश्रमिणो ये दोषास्ते तत्र वर्तन्त एव। अयं तु तत्र विशेषः—हरिप्रसादो वेदसर्वस्वस्य ६७ सप्तषष्टितमे पृष्ठ आह—'चरणव्यूहटीकाकारेण महीदासेन ऋग्वेदे १०४७२ द्वासप्तत्यधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रमृच उक्ताः। सैषा संख्या नैमित्तिकद्विपदासहिता वर्तते। तासां च १४० चत्वारिंशदधिकं शतं संख्या विद्यते। अतो यदि १४० चत्वारिंशदधिकशतं संख्या न्यूनीक्रियेत तर्हि ऋग्वेदस्य १०३३२ द्वात्रिंशदधिकत्रिशतोत्तरदशसहस्रमृक्संख्याऽवशिष्यते' इति।

अत्र सर्वासामपि १४० चत्वारिंशदधिकशतानां नैमित्तिकद्विपदानां न्यूनीकरणं नाम तस्य महान् भ्रमः। किमेता ऋग्वेदस्यावयवा न सन्ति, यदेताः सर्वा अपि निष्कास्यन्ते? वस्तुतोऽत्र चतुष्पदापक्षे १४० चत्वारिंशदधिकशतसंख्याया अर्धा ७० सप्ततिसंख्यैव न्यूनीकरणीया।

उपसंहारः

अनेन ऋक्संख्याविमर्शेणावगम्यते यन्माधव-मैक्समूलर-मैकडानल-सत्यव्रतसामश्रमिप्रभृतयो नित्यनैमित्तिकद्विपदानां स्वरूपमेव नावबुबुधिरे। तदनवबोधादेव च ऋग्वेदस्य ऋग्गणनायामेते बहुधा बभ्रमुः, अन्यांश्च भ्रमयाञ्चक्रुः।

विषय में लिखा है। उनका समग्र लेख प्रायः पं० सत्यव्रत सामश्रमी के संस्कृत लेख का भाषानुवाद मात्र है। अतः उनके लेख में भी वे समस्त दोष विद्यमान हैं, जो उनमे आधारभूत पं० सत्यव्रत सामश्रमी के लेख में हैं। इसलिये उन पर पुनः लिखना पिष्टपेषणवत् होगा। हां, उनके लेख में जो नये दोष हैं, उनका कुछ निदर्शन हम यहां कराते हैं—

पं० हरिप्रसाद ने 'वेदसर्वस्व' पृष्ठ ६७ पर लिखा है—

चरणव्यूह के टीकाकार महीदास ने ऋग्वेदमन्त्रों की संख्या दस हजार चार सौ बहत्तर (१०४७२) लिखी है। परन्तु यह नैमित्तिक द्विपदा ऋचाओं सहित है, जिनकी संख्या एक सौ चालीस होती है। यदि वह निकाल दी जाए, तो शेष संख्या दस हजार तीन सौ बत्तीस (१०३३२) रह जाती है।'

इस लेख से विदित होता है कि पं० हरिप्रसाद ने न तो द्विपदा ऋचाओं का स्वरूप ही समझा, और न हि महीदास का ऋग्गणना-प्रकार। १४० नैमित्तिक द्विपदाओं की ७० चतुष्पदा ऋचाएं बनती हैं। अतः यदि नैमित्तिकद्विपदात्व ही न्यून करना है, तो ७० संख्या न्यून करनी चाहिए। पूरी १४० द्विपदाओं को निकालना किसी प्रकार उचित नहीं है।

उपसंहार

इस ऋक्संख्या-विमर्श से यह स्पष्ट है कि वेङ्कटमाधव मैक्समूलर मैकडानल और सत्यव्रत सामश्रमी प्रभृति लेखकों ने नित्य नैमित्तिक द्विपदाओं के भेद को यथार्थ रूप में नहीं समझा।

तदेवमृक्सर्वानुक्रमणीमनुसरन् यज्ञप्रक्रियायां नित्यनैमित्तिकद्विपदासहिताः सबालखिल्या १०५५२ द्विपञ्चाशदधिकपञ्चशतोत्तरदशसहस्रमृचो भवन्ति । ता एव चाध्ययनकाले १४० चत्वारिंशदधिकशतानां नैमित्तिकानां द्विपदानां चतुष्पदीभावे १०४८२ द्व्यशीत्यधिकचतुःशतोत्तरदशसहस्रं जायन्ते । नैवास्यामृक्संहितायां महति सुदीर्घे काले एकाक्षरवर्णमात्रस्यापि भेदः समजनि ऋचां नैयूनाधिक्यस्य तु कथैव का ? यः कश्चिदपि प्राचीनानामर्वाचीनानां च विदुषां मते ऋक्संख्याभेदः समुपलभ्यते, स सर्वोऽपि ऋग्गणनाप्रकारभेदात् शाखाभेदात् तत्तद्विदुषामज्ञानाद्वा दृश्यते, न तु वास्तविकः, इत्यलमतिपल्लवितेन ॥

इसी कारण ये लोग ऋग्वेद की ऋक्संख्या की गणना में बहुत प्रकार से भ्रांत हुए हैं, तथा उन्होंने औरों को भी भ्रान्त किया है।

इस प्रकार ऋग्वेदीय ऋक्सर्वानुक्रमणी के अनुसार नित्य नैमित्तिक उभयविध द्विपदाओं तथा बालखिल्य ऋचाओं सहित ऋग्वेद में १०५५२ दस सहस्र पांच सौ बावन ऋचाएं हैं । नैमित्तिक १४० द्विपदाओं को अध्ययनकाल में चतुष्पदा बनाकर (७०) गणना करने पर १०४८२ दस सहस्र चार सौ बयासी ऋचाएं होती हैं ।

इस ऋक्संहिता में गत सुदीर्घ काल में एक अक्षर वा मात्रा का भेद नहीं हुआ। उस अवस्था में ऋक्संख्या में भेद होना तो उपपन्न ही नहीं होता । इस कारण प्राचीन और अर्वाचीन विद्वानों की ऋक्संख्या में जो भेद उपलब्ध होता है, वह सब ऋग्गणना के प्रकार भेद से, शाखा भेद से तथा गणक विद्वानों के अज्ञान वा प्रमाद के कारण दिखाई पड़ता है। वास्तव में 'अग्निमीळे' के 'अ' से 'सुसहासति' तक कहीं अक्षर वर्ण मात्रा स्वर का भी भेद नहीं है।